कक्षा
9

राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन एवं शौर्य परंपरा

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

कक्षा 9
राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन एवं शौर्य परंपरा

राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन एवं शौर्य परंपरा

d{kk&9

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन एवं शौर्य परंपरा

d{kk&9

संयोजक

प्रोफेसर बी. एम. शर्मा

पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर

लेखकगण

प्रोफेसर सोहनलाल मीना

विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

डॉ. आलोक कुमार श्रीवास्तव

परीक्षा नियंत्रक एवं शैक्षणिक समन्वयक,
हरिदेव जोशी पत्रकारिता और
जनसंचार विश्वविद्यालय, जयपुर

डॉ. नरेन्द्र नाथ

सह आचार्य, राजनीतिशास्त्र
डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

डॉ. पयोद जोशी

सह आचार्य, राजनीतिशास्त्र
माणिक्यलाल वर्मा राजकीय महाविद्यालय,
भीलवाड़ा

प्राक्कथन

भारत का राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन विश्व इतिहास का एक गौरवशाली अध्याय है। विराट जन सहभागिता के साथ संचालित इस मुक्ति संग्राम ने न केवल भारत के लिए स्वराज हासिल किया, बल्कि इसने राष्ट्र–निर्माण, सामाजिक रूपांतरण, न्यायोचित आर्थिक विकास तथा लोकतंत्र पर आधारित सुराज की स्थापना की ऊर्जा भी संरचित की। अतः स्वातंत्र्योत्तर भारत को समझने के लिए स्वतंत्रता संग्राम का सम्यक् अध्ययन आवश्यक है।

1857 की क्रांति में छावनियों के विद्रोही सैनिकों ने आम किसानों के सहयोग से ब्रिटिश साम्राज्य की चूलें हिला दीं। यहां से क्रांतिकारी राष्ट्रवाद की वह धारा फूटी, जिसने कवियों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं को अदम्य साहसिक कार्रवाईयों के लिए प्रेरित किया। किसानों और जनजातियों के साथ–साथ रजवाड़ों की समूची प्रजा राजनीतिक आंदोलनों में कूद पड़ी। जन संघर्षों की इस शृंखला की परिणति देश की आजादी में हुई। इसके साथ ही देशी रियासतों का एकीकरण भी राजस्थान राज्य के रूप में हुआ।

राजस्थान में जन संघर्ष की यह चेतना स्वतंत्रता के पश्चात आम जन की शौर्य परंपरा में प्रतिफलित हुई। सैन्य अभियानों और आतंकविरोधी कार्रवाईयों में राजस्थान के अनेक सपूतों के बलिदान ने भारत गणराज्य की स्वतंत्रता और अखण्डता की सुरक्षा की है। राजस्थान में यह संघर्ष चेतना और शौर्य परंपरा जनसाधारण की संस्कृति का अंग बन गए हैं, जिसका पारायण कर राजस्थान के विकास में अहम् भूमिका निभायी जा सकती है।

कक्षा–9 के विद्यार्थी प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के स्वरूप, शैली, प्रयोजन, रणनीति आदि का अध्ययन कर सकेंगे। राजस्थान में संचालित मुक्ति संग्राम के विविध संदर्भ है। यहां शेष ब्रिटिश भारत की तरह औपनिवेशिक आधीनता तो थी ही, साथ ही सामंतवाद भी विद्यमान था। राजस्थान में दोहरी गुलामी से संघर्ष के अध्ययन के साथ साथ विद्यार्थी राजस्थान के रणबाकुरों के अदम्य साहस तथा वीरों की शौर्य परम्परा का अध्ययन भी कर सकेंगे। आशा है, प्रस्तुत पुस्तक विद्यार्थी जगत् के लिए उपयोगी साबित होगी।

संयोजक
प्रोफेसर बी.एम. शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान लोक सेवा आयोग, अजमेर

राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन और शौर्य परम्परा

विषय कोड–79
पूर्णांक–100

अध्याय–1 : 1857 की क्रांति **18**

नसीराबाद में क्रांति, नीमच में क्रांति, एरिनपुरा और आउवा की क्रांति, मेवाड़ में क्रांति की गूंज, कोटा में क्रांति, अन्य राज्यों में क्रांति की गूँज, सलूम्बर और कोठारिया का योगदान, 1857 की क्रांति की असफलता के कारण, 1857 की क्रांति की असफलता के परिणाम।

अध्याय–2 : राजस्थान के क्रांतिकारी **18**

डूंगजी–जवाहरजी, सीकर, लोठूजी निठारवाल, सीकर, अमरचंद बांठिया, बीकानेर, विजयसिंह पथिक, बिजौलिया, अर्जुनलाल सेठी जयपुर, केसरीसिंह बारहठ, शाहपुरा, कुंवर प्रतापसिंह बारहठ शाहपुरा, बालमुकुन्द बिस्सा, जोधुपर, सागरमल गोपा, जैसलमेर, नानाभाई खांट, रास्तापाल (डूंगरपुर), 'सरदार' हरलालसिंह, झुंझुनूं, कप्तान दुर्गाप्रसाद, नीम का थाना, जानकी देवी बजाज, सीकर, अंजना देवी चौधरी, सीकर, रतन शास्त्री, जयपुर, रमा देवी, जयपुर, कालीबाई, डूंगरपुर, किशोरी देवी।

अध्याय–3 : राजस्थान के प्रमुख किसान आंदोलन **12**

बिजौलिया आन्दोलन, बेगूं किसान आंदोलन, मेवाड़, भरतपुर किसान आंदोलन, मेव किसान आंदोलन, अलवर किसान आंदोलन एवं नीमूचाणा हत्याकाण्ड, बूंदी राज्य में किसान आन्दोलन, जयपुर राज्य में किसान आन्दोलन, मारवाड़ किसान आंदोलन, बीकानेर किसान आंदोलन।

अध्याय–4 : राजस्थान में जनजातियों के आंदोलन **12**

मेर विद्रोह, भील विद्रोह, उदयपुर राज्य में मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आन्दोलन, मीणा विद्रोह।

अध्याय–5 : राजस्थान में जनजागृति और प्रजामण्डल **18**

राजस्थान में प्रजामण्डलों की स्थापना, प्रजामण्डलों की स्थापना, जोधपुर में जन आन्दोलन, बीकानेर में जन आन्दोलन, जैसलमेर में जन आन्दोलन, मेवाड़ में जन आन्दोलन, कोटा में जन आन्दोलन, बूंदी में जन आन्दोलन, जयपुर में जन आन्दोलन, अलवर में जन आन्दोलन, भरतपुर में जन आन्दोलन, धौलपुर में जन आन्दोलन, करौली में जन आन्दोलन, अन्य राज्यों में जन आन्दोलन, प्रजामण्डलों का मूल्यांकन।

अध्याय–6 : राजस्थान का एकीकरण **10**

मत्स्य संघ का निर्माण, राजस्थान संघ का निर्माण, मेवाड़ का राजस्थान संघ में विलय, वृहत् राजस्थान का निर्माण, मत्स्य संघ का विलय, सिरोही का प्रश्न, अजमेर का विलय।

अध्याय–7 : राजस्थान की शौर्य परंपरा **12**

स्वतंत्रता पश्चात राजस्थान में शौर्य–परम्परा की निरंतरता, राजस्थान के परमवीर चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी, शहीद मेजर पीरू सिंह शेखावत, शहीद मेजर शैतान सिंह, राजस्थान के महावीर चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी, सूबेदार

चूनाराम फागड़िया, शहीद सैनिक ढोकलसिंह, ब्रिगेडियर रघुवीर सिंह राजावत, कर्नल उदय सिंह भाटी , ले. कर्नल हणूत सिंह, ले. कर्नल सवाई भवानी सिंह, ग्रुप कैप्टन चंदन सिंह, नायक सुगन सिंह, नायक दिगेन्द्र कुमार परस्वाल, राजस्थान के अशोक चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी, राजस्थान के कीर्ति चक्र, शौर्य चक्र, वीर चक्र, सेना मेडल और विशिष्ट सेवा मेडल विजेता प्रमुख वीर सेनानी, पुलवामा हमला और राजस्थान के वीर योद्धा, राजस्थान के शहीद– (1) रोहिताश लाम्बा (2) भागीरथ (3) नारायणलाल गुर्जर (4) जीतराम गुर्जर (5) हेमराज मीणा।

निर्धारित पुस्तक :

राजस्थान का स्वतंत्रता आंदोलन और शौर्य परंपरा : माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर।

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ संख्या
1	1857 की क्रान्ति	1–13
2	राजस्थान के क्रांतिकारी	14–26
3	राजस्थान के प्रमुख किसान आंदोलन	27–36
4	राजस्थान में जनजातियों के आंदोलन	37–47
5	राजस्थान में जनजागृति और प्रजामण्डल	48–61
6	राजस्थान का एकीकरण	62–68
7	राजस्थान की शौर्य परम्परा	69–79
	संदर्भ ग्रंथ सूची	80

अध्याय 1

1857 की क्रान्ति

मुगल साम्राज्य के पतन के पश्चात् देश में उत्पन्न अराजकता से राजस्थान भी अछूता नहीं रहा। औरंगजेब की मृत्यु से उत्पन्न शक्ति रिक्तता को एकबारगी तो मराठों ने भर दिया। मराठों ने दक्षिण में प्रभुत्व स्थापित करने के पश्चात् मालवा और गुजरात में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया था। अतः अब उनके लिए राजस्थान मे प्रवेश करना सहज हो गया था। मई 1711 ई. में प्रथम बार मराठों ने मंदसौर के निकट मेवाड़ी क्षेत्र से धन एकत्र किया था। इस घटना से चिंतित उदयपुर के महाराणा संग्राम सिंह ने पहले जयपुर के शासक जयसिंह और बाद में मुगल बादशाह मुहम्मद शाह से मराठा समस्या के बारे में विचार–विमर्श किया था। 1724 ई. के बाद राजस्थान में मराठा आक्रमणों में तेजी आई। इसी बीच अप्रैल, 1734 ई. में बूँदी के पदच्युत शासक बुद्धसिंह ने मराठा सहायता प्राप्त कर दलेल सिंह को गद्दी से हटा दिया। राजस्थान के किसी शासक द्वारा आन्तरिक संघर्ष में मराठों को आमंत्रित करने का यह प्रथम अवसर था। बाद में तो राजस्थान में मराठों का हस्तक्षेप बढ़ता ही गया।

1735 ई. में मालवा पर अधिकार करने के बाद मराठों को राजस्थान पर आक्रमण करने के लिए एक आसान मार्ग मिल गया। राजस्थान में मराठे कोटा, मेवाड़, डूंगरपुर. बांसवाड़ा में घुसपैठ कर वहाँ से धन पाने के बाद कुछ समय तक संतुष्ट रहे, लेकिन शीघ्र ही वे राजाओं को ही नहीं व्रन सेठ–साहूकारों को भी लूटने लगे। उन्होंने राजस्थान के नरेशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करना भी प्रारम्भ कर दिया। बूँदी, जोधपुर और जयपुर रियासतों में उनका प्रवेश इसी बहाने हुआ।

नादिर शाह के आक्रमण के समय भी मराठों ने हिन्दू धर्म के नाम पर राजस्थान के राजाओं को संगठित करने का प्रयास किया। लेकिन मुगल दरबार में दलबन्दी के कारण राजपूत शासक भी परस्पर लड़ने लगे। इस प्रकार केन्द्र में उत्पन्न शून्यता के पूर्ति के लिए मराठा राजस्थान में आने लगे। शाहू ने पेशवा बाजीराव को राजस्थान से 'चौथ' और 'सरदेशमुखी' प्राप्त करने का आदेश दिया। 1732 ई. में सवाई जयसिंह, जो मालवा का सूबेदार बना, उसे मराठों ने घेर लिया। जयसिंह ने पराजय स्वीकार कर ली और 28 परगने मराठों को देने पड़े। 1761 से 1791 के मध्य राजस्थान में राजपूत शासकों की कमजोर स्थिति के कारण विभिन्न राज्यों पर मराठों का प्रभुत्व हो गया।

राजस्थान में बढ़ते मराठा हस्तक्षेप ने जयसिंह तथा अन्य राजपूत राजाओं की आंखें खोल दी। मराठों से मुक्ति पाने के लिए धन का सहारा लिया गया। पर जब धन लेने के बाद भी मराठों ने मालवा

खाली नहीं किया, तो पुनः संगठित प्रयास किए जाने लगे। अब धन के बजाय शक्ति के प्रयोग से मराठों को राजस्थान से निकालने का निश्चय किया गया। अतः जुलाई 1734 ई. में जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, कोटा, किशनगढ़, नागौर बीकानेर, के शासक मेवाड़ में हुरड़ा नामक स्थान पर एकत्र हुए और 17 जुलाई 1734 ई. को एक संधिपत्र पर हस्ताक्षर हुए, जिसके अनुसार राजस्थान के सभी शासकों ने विपत्ति के समय सहयोग देने का वादा किया। वर्षा ऋतु के बाद मराठों के विरुद्ध कार्रवाई हेतु रामपुरा में एकत्र होना तय किया। किसी राजा के शत्रु को अपने राज्य में आश्रय या शरण न देने की शपथ ली। परन्तु इस सम्मेलन के वांछित परिणाम नहीं निकले क्योंकि रियासती शासकों में आपसी द्वेष था। प्रतिभा सम्पन्न और क्रियाशील नेतृत्व का अभाव रहा। रियासतों की स्वार्थी नीतियां और कार्य सम्भवतः सम्मेलन की असफलता के लिए उत्तरदायी थे। 1735 ई. में मुगल सम्राट और राजपूत शासकों की सेनाओं ने मराठों को खदेड़ने का पुनः असफल प्रयास किया। पेशवा अक्टूबर 1735 ई. में उत्तर भारत की यात्रा पर निकला। उसने महाराजा जगतसिंह का आतिथ्य स्वीकार किया और उपहार तथा चौथ का समझौता हुआ। फिर वह जयपुर आया। जयसिंह ने मराठों और मुगल सम्राटों में समझौता करवाना चाहा, पर वह असफल रहा। पेशवा की राजस्थान यात्रा का परिणाम यह निकला कि मुगलों के साथ–साथ राजपूत मराठों के भी करदाता बन गए। 1738 ई. में मुगल सम्राट की ओर से निजाम को बिना युद्ध किए ही दुराहसराय की अपमानजनक संधि करनी पड़ी, जिसके अनुसार मराठों को मालवा की सूबेदारी और 50 लाख रुपये प्राप्त हुए। 1742 ई. में मराठों ने मारवाड़ में प्रविष्ट होकर सोजत, रायपुर और जैतारण परगनों में चौथ वसूल करना आरम्भ कर दिया। 1787 ई. में राजपूतों ने संगठित होकर तूंगा नामक स्थान पर मराठों को परास्त किया। 1791 ई. के बाद मराठा शक्ति क्षीण होने लगी। इस समय दक्षिण भारत में अंग्रेजों ने अपने पैर जमा लिए थे और वे राजस्थान में घुसने का प्रयास कर रहे थे।

राजस्थान के राज्यों में उत्तराधिकार के संघर्ष और सामन्ती प्रतिस्पर्धा के कारण उनकी राजनीतिक स्थिति कमजोर हो गई। 1791 ई. में अम्बाजी इंगले ने मेवाड़ के महाराणा को सहयोग दिया। फलस्वरूप डूंगरपुर, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ आदि क्षेत्रों पर मेवाड़ के महाराणा का अधिकार हो गया। परन्तु रियासती घरानों के आपसी वैमनस्य के कारण अम्बाजी इंगले पूर्ण सफलता नहीं पा सके। 1795 ई. में मेवाड़ पर चूंडावतों का अधिकार हो गया। अतः उनका अन्य शासकीय समूहों के साथ संघर्ष शुरू हो गया। 1802 ई. में अमीर खां पिंडारी ने नाथद्वारा पर अधिकार कर लिया। भीमसिंह रियासती घरानों के आपसी वैमनस्य को नियंत्रित नहीं कर पाए। 1803 ई. में मेवाड़ के शासक ने जयपुर नरेश के माध्यम से अंग्रेजों से संधि करने का प्रयास किया, पर वह असफल रहे। 1793 ई. से 1813 ई. के मध्य जोधपुर की अव्यवस्था का मुख्य कारण सामन्ती प्रतिस्पर्धा, संकीर्णता एवं उत्तराधिकार का संघर्ष था। दोनों ही पक्षों ने भाड़ैत सैनिकों को ऊँची धनराशि देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया। परिणामतः राज्य आर्थिक संकट में घिर गया।

राजस्थान के शासकों ने मराठों के बढ़ते आतंक से मुक्ति पाने के लिए मराठों के शत्रु अंग्रेजों से मित्रता करने के प्रयास शुरू कर दिए। सर्वप्रथम जयपुर के महाराजा पृथ्वीसिंह ने 1776 ई. में अपने एक प्रतिनिधि को गवर्नर जनरल के पास भेजा और अंग्रेजों से मैत्री की इच्छा प्रकट की। जोधपुर राज्य ने भी ऐसा ही प्रयास किया, पर वह सफल नहीं हुआ। 1803 ई. में अपनी नीति में परिवर्तन कर अंग्रेज भी राजपूत राज्यों से संधि करने के इच्छुक हो गए। नवंबर 1803 ई. में अंग्रेज सेनापति लॉर्ड लेक ने

राजस्थान की उत्तरी पूर्वी सीमा पर स्थित लासवाड़ी के रण क्षेत्र में सिंधिया को निर्णायक रूप से परास्त कर दिया। मराठों की इस पराजय ने राजपूत शासकों के लिए मराठों की अधीनता से मुक्ति का स्वर्णावसर प्रदान कर दिया। 1803 ई. की संधि की शर्तों में तय किया गया कि दोनों एक दूसरे के प्रति मैत्रीपूर्ण व्यवहार रखेंगे; कम्पनी इन राज्यों से खिराज नहीं लेगी तथा आन्तरिक मामलों में भी हस्तक्षेप नहीं करेगी; इन राज्यों की सुरक्षा का दायित्व कम्पनी पर होगा; अन्य राज्यों से विवाद कम्पनी की सहायता से सुलझाए जाएंगे, इत्यादि। भरतपुर, अलवर, जयपुर, जोधपुर आदि ने इस संधि पर हस्ताक्षर कर दिए। 1811 ई. में सेटन के स्थान पर चार्ल्स मेटकॉफ दिल्ली का रेजीडेंट बना। उसने गवर्नर जनरल लॉर्ड मिंटो को सुझाव दिया कि मराठों, अमीर खाँ और पिण्डारियों की विध्वंसकारी कार्रवाइयों को समाप्त करने के लिए ब्रिटिश संरक्षण में राजपूत राज्यों का एक संघ बना लिया जाए।

तत्कालीन गवर्नर लॉर्ड हेस्टिंग्स सभी विरोधियों का दमन करके भारत में कम्पनी की सर्वोच्च सत्ता स्थापित करना चाहता था। किन्तु यह तभी संभव था कि जब होलकर और सिंधिया को उनके राज्यों में सीमित कर दिया जाता और पिण्डारियों की शक्ति का दमन किया जाता। इसके लिए राजपूत राज्यों को संरक्षण में लेना अंग्रेजों के लिए अनिवार्य था क्योंकि ये राज्य ही सिंधिया, होलकर और पिण्डारियों के प्रभाव क्षेत्र में थे। अतः अंग्रेजों ने 5 नवंबर 1817 ई. को होलकर से नई संधि करके राजस्थान के राज्यों

राजस्थान में क्रांति के समय रियासती शासक

कोटा रियासत	–	राम सिंह
जोधपुर रियासत	–	तख्त सिंह
भरतपुर रियासत	–	जसवंत सिंह
उदयपुर रियासत	–	स्वरूप सिंह
जयपुर रियासत	–	राम सिंह द्वितीय
सिरोही रियासत	–	शिव सिंह
धौलपुर रियासत	–	भगवंत सिंह
बीकानेर रियासत	–	सरदार सिंह
करौली रियासत	–	मदनपाल
टोंक रियासत	–	नवाब वजीरूद्दौला
बूंदी रियासत	–	राम सिंह
अलवर रियासत	–	विनय सिंह
जैसलमेर रियासत	–	रणजीत सिंह
झालावाड़ रियासत	–	पृथ्वी सिंह
प्रतापगढ़ रियासत	–	दलपत सिंह
बांसवाड़ा रियासत	–	लक्ष्मण सिंह
डूंगरपुर रियासत	–	उदय सिंह

के साथ संधि करने का अधिकार प्राप्त कर लिया। इधर मेटकॉफ का निमंत्रण मिलते ही करौली, कोटा, उदयपुर, बीकानेर, किशनगढ़, जयपुर, जैसलमेर आदि ने कम्पनी से संधि कर ली। सबसे अंत में 1823 ई. में सिरोही राज्य से संधि की गई। इस प्रकार 1817 ई. से 1823 ई. के दौरान राजस्थान पर स्थापित यह ब्रिटिश आधिपत्य 1947 ई. में स्वतंत्रता प्राप्ति तक अक्षुण्ण रहा।

19वीं सदी के आरम्भ में 20 रियासतें थी। इनमें से 17 राजपूत, 2 जाट और एक मुस्लिम शासक द्वारा शासित थी। इन राज्यों के साथ की गई संधियों में कुछ सामान्य शर्ते थीं तो कुछ विशिष्ट, जो उस राज्य से संबंधित थीं। संधि की सामान्य शर्तें इस प्रकार थीं–

(1) संधि द्वारा रियासती शासकों ने अंग्रेजों की सर्वोच्चता स्वीकार कर ली।

(2) अंग्रेजों ने रियासती राजाओं का वंशानुगत राज्याधिकार स्वीकार कर लिया।

(3) अंग्रेजों ने बाहरी आक्रमण से प्रत्येक राज्य की सुरक्षा करने और आन्तरिक शांति एवं व्यवस्था बनाये रखने में सहायता का आश्वासन दिया।

(4) संधि करने वाले प्रत्येक राज्य में एक अंग्रेज पोलिटिकल एजेन्ट रखना तय किया गया। साथ ही यह आश्वासन भी दिया गया कि पोलिटिकल एजेन्ट उनके राज्य–कार्यो में हस्तक्षेप नहीं करेंगे।

(5) ब्रिटिश संरक्षण के बदले रियासती शासकों को अपनी विदेश नीति अंग्रेजों को सौंपनी पड़ी और अपने आपसी विवादों को अंग्रेजों की मध्यस्थता हेतु प्रस्तुत करने का वादा करना पड़ा।

(6) आवश्यकता पड़ने पर रियासती शासक अपने राज्यों के समस्त सैनिक साधन अंग्रेजों के सुपुर्द कर देंगे।

(7) अंग्रेजों को वार्षिक खिराज देने संबंधी धारा सभी राज्यों की संधियों में अलग–अलग थी।

खिराज की यह राशि निर्धारित करने के लिए मराठों को दिए जाने वाले खिराज को आधार बनाया गया था। ब्रिटिश संरक्षण स्वीकार करने के फलस्वरूप राजस्थान के रियासती नरेशों को सुरक्षा तो प्राप्त हुई, पर उन्हें अपनी स्वतंत्रता खोनी पड़ी।

उपर्युक्त संधियों का राजस्थान के राज्यों पर बहुविध प्रभाव पड़ा। कम्पनी सरकार को नियमित रूप से खिराज देने से राजस्थान के राज्यों की आर्थिक स्थिति कमजोर हो गई। पोलिटिकल एजेन्ट राज्य में व्यवस्था बनाये रखने के नाम पर निरन्तर हस्तक्षेप करने लगे। शासन कार्य और अधिकारों में आई कमी के कारण, राजा शासन संबंधी कार्यो के प्रति उदासीन रहने लगे। ऐसी परिस्थितियों में ब्रिटिश पॉलिटिकल एजेन्ट राज्य में तानाशाह बन गए। कम्पनी द्वारा खिराज वसूल करने के अलावा समय–समय पर कई खर्चे बलात् थोप दिए जाते थे। अंग्रेजों ने राज्यों के आर्थिक साधनों पर भी अधिकार करने का प्रयास किया। नमक उत्पादन के प्रमुख क्षेत्र सांभर झील और मेवाड़ के अफीम उत्पादन क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया गया। शांति और व्यवस्था बनाए रखने के नाम पर लगभग सभी राज्यों में अंग्रेजी सैनिक टुकड़ियां स्थापित कर दी गईं, जिनका खर्च भी संबंधित राज्यों को ही वहन करना पड़ता था। भारी खिराज पर ब्याज और अन्य खर्चों के थोपे जाने के फलस्वरूप राज्यों की आर्थिक स्थिति कमजोर हो गई।

राजस्थान के शासकों ने मराठा आतंक से सुरक्षा तथा अपने सामन्तों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए ही अंग्रेजों के साथ 1818 ई. की संधि की थी। संधि सम्पन्न होने के बाद राजपूत शासकों ने अंग्रेजों की सहायता से सामंतों की शक्ति कुचलने का प्रयास किया। कालांतर में अंग्रेजों ने ऐसे अनेक कदम उठाए, जिनसे सामंतों की स्थिति कमजोर हुई। यथा, सामंतों की सैनिक सेवा के बदले अब उनसे नकद रुपया वसूल करने का निश्चय किया गया। जागीर क्षेत्रों में सामंतों को कई विशेषाधिकार प्राप्त थे। जैसे जागीरों के निवासी अपने सामन्त की आज्ञा के बिना किसी दूसरे स्थान पर नहीं बस सकते थे। सामंत व्यापारियों से राहदारी और दाना–पानी आदि शुल्क वसूल करके, उसके बदले व्यापारियों को सुरक्षा प्रदान करते थे। उनके इन विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया गया। 19 वीं सदी के पूर्वार्द्ध तक जागीर क्षेत्र का नेतृत्व सामन्तों के पास था तथा समाज में उनकी प्रतिष्ठा भी बढ़ी–चढ़ी थी। किन्तु 19 वीं सदी के अंत तक जागीर क्षेत्रों में सामन्तों के नेतृत्व में कमी आई। अब वे उतने प्रभावशाली नहीं रहे।

अंग्रेजों ने डूंगरपुर के शासक जसवंत सिंह को गद्दी से हटाकर प्रतापगढ़ के शासक के पौत्र दलपत सिंह को वहाँ का शासक बना दिया। इससे वहाँ की जनता में ब्रिटिश सरकार के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। इसी प्रकार जब अंग्रेजों ने जयपुर की राजमाता भटियाणी को अधिकारच्युत करने का प्रयास किया, तो वहाँ के लोगों ने क्रुद्ध होकर कप्तान ब्लेक की हत्या कर दी। कोटा में अंग्रेजों ने तत्कालीन महाराव किशोर सिंह के विरुद्ध रियासत के फौजदार जालिम सिंह के दावों का समर्थन किया जिससे कोटा के हाड़ा राजपूत अंग्रेजों के विरुद्ध हथियार लेकर उठ खड़े हो गए। अलवर और भरतपुर रियासतों में अंग्रेजों ने हस्तक्षेप कर वहाँ अवयस्क राजकुमारों को गद्दी पर बैठा दिया, क्योंकि शासक के अवयस्क होने की स्थिति में अंग्रेजों को राज्य के प्रशासन पर अपना नियंत्रण स्थापित करने का अवसर मिल जाता था। जोधपुर के महाराजा मानसिंह भी ब्रिटिश सरकार के घोर विरोधी थे। उनके प्रयत्नों से अन्य रियासतों में भी ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध असंतोष पनपने लगा।

राजस्थान में क्रांति के समय ब्रिटिश पॉलिटिकल एजेन्ट		
कोटा रियासत	–	मेजर बर्टन
जोधपुर रियासत	–	मैक मैसन
भरतपुर रियासत	–	मोरिसन
जयपुर रियासत	–	ईडन
उदयपुर रियासत	–	शावर्स ऑर
सिरोही रियासत	–	जे. डी. हॉल

राजनीतिक आधिपत्य स्थापित करने के पश्चात अंग्रेज सरकार, ब्रिटिश भारत की भांति राजस्थान पर भी सांस्कृतिक विजय प्राप्त करने को उत्सुक हो उठी। ब्रिटिश सरकार ने सामाजिक सुधार के लिए प्रचलित परम्पराओं, रीतिरिवाजों और कुरीतियों को समाप्त करने के लिए विशेष कदम उठाए। इन कुरीतियों में कन्या वध, दास प्रथा, सतीप्रथा सम्मिलित थीं। इस दिशा में उठाए गए कदमों

से जनता यह समझने लगी कि अंग्रेज राजस्थान के सामाजिक ढांचे को विघटित करना चाहते है। अंग्रेजों की सामाजिक और सामान्य जीवन में हस्तक्षेप की नीति ने जनता में असंतोष उत्पन्न किया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 1818 की संधि के बाद, अंग्रेजों द्वारा राजस्थान के राज्यों के प्रशासन में अवांछनीय हस्तक्षेप, आर्थिक संसाधनों पर आधिपत्य, अंग्रेजों द्वारा वसूल की जाने वाली वार्षिक खिराज की राशि, सामंतों के विशेषाधिकारों पर कुठाराघात और राजस्थान के सामाजिक जीवन में हस्तक्षेप ने सर्वत्र असंतोष को जन्म दिया। राजा, सामंत और साधारण जनता सभी वर्ग अंग्रेजों से असंतुष्ट थे।

ईसाई मत के प्रचारकों की संदिग्ध गतिविधियों के कारण अजमेर–मेरवाड़ा क्षेत्र में यह विचार पनपने लगा कि अंग्रेज हिन्दुओं का मतान्तरण कर उन्हें जबरदस्ती ईसाई बनाने के लिए प्रयत्नशील है। इससे उनमें ब्रिटिश सत्ता के प्रति तीव्र आक्रोश उत्पन्न हो गया। ब्रिटिश विरोधी भावनाओं को पनपाने में राजस्थान के कवियों व साहित्यकारों ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनके द्वारा ऐसे शासकों की निन्दा की गई जो ब्रिटिश सत्ता के भक्त थे तथा उन शासकों एवं सामन्तों की प्रशंसा की गई जो ब्रिटिश सत्ता के विरोधी थे। ऐसे कवियों में कवि बांकीदास, राघोदास, सान्दू गांगजी तथा महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण आदि के नाम उल्लेखनीय है। इससे स्पष्ट है कि भारत में क्रांति प्रारम्भ होने से पूर्व ही देशी रियासतों में ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध तीव्र असंतोष व्याप्त था।

सन् 1857 की क्रांति आरम्भ होने के समय राजस्थान में अंग्रेजी सैनिकों की 6 छावनियां थी– नसीराबाद, नीमच, देवली, ब्यावर, एरिनपुरा और खैरवाड़ा। इन सब छावनियों में लगभग पांच हजार सैनिक थे, किन्तु किसी भी छावनी में कोई अंग्रेज सैनिक नहीं था। केवल 30 अंग्रेज अधिकारी थे।

मेरठ में क्रांति होने की सूचना जैसे ही राजस्थान के ए.जी.जी. को प्राप्त हुई, उसने देशी रियासतों के शासकों को यह आवश्यक निर्देश भेजे कि वे क्रांतिकारियों को अपने राज्य में न घुसने दें और जो भी ब्रिटिश सत्ता का विरोध करे, उनका कठोरतापूर्वक दमन करें।

नसीराबाद में क्रांति :

राजस्थान में क्रांति का सूत्रपात नसीराबाद से हुआ। इसके निम्न कारण रहे हैं–

1. उस समय नसीराबाद में 15 वीं और 30 वीं बंगाल नेटिव इन्फैंट्री, भारतीय तोपखाने की सैनिक टुकड़ी तथा पहली बम्बई लांसर्स के सैनिक विद्यमान थे। मेरठ विद्रोह की सूचना से 15वीं नेटिव इन्फैंट्री के सैनिकों ने सोचा कि यह सारी कार्रवाई भारतीय सैनिकों को कुचलने के लिए की गई है तथा तोपें भी उनके विरुद्ध प्रयोग करने के लिए तैयार की गई है। अतः उनमें विद्रोह की भावना जाग्रत हो गई।

2. 15वीं बंगाल नेटिव इन्फैंट्री की एक टुकड़ी काफी समय से अजमेर शस्त्रागार की रक्षा कर रही थी। संदेह के कारण उसे वहां से नसीराबाद भेज दिया। इससे सैनिकों के मन में यह धारणा बन गई कि उन पर अविश्वास किया जा रहा है। अतः वे ब्रिटिश अधिकारियों से नाराज हो गए।

3. इन दिनों बाजारों और छावनियों में बंगाल और दिल्ली के संदेशवाहक साधू और फकीरों के वेश में राजस्थान आए और उन्होंने चर्बी वाले कारतूसों के विरुद्ध प्रचार कर विद्रोह का संदेश प्रचारित किया।

भारतीय सैनिकों ने सोचा कि अंग्रेज उन्हें धोखे से ईसाई बनाना चाहते हैं। इस धार्मिक भावना के कारण भी उत्तेजना फैली।

4. भारतीय सैनिकों पर नियंत्रण रखने के लिए बाहर से यूरोपियन सेना और कुछ तोपें मंगवाई गई। इस तथ्य को गुप्त रखा गया था और बाद में जब यह बात प्रकट हो गई, तो सेना में उत्तेजना फैल गई।

इन्हीं कारणों से 28 मई, 1857 ई. को 15वीं बटालियन नेटिव इन्फैंट्री के सैनिकों ने तोपखाने पर अधिकार कर लिया। सारी छावनी में भगदड़ मच गई। सैनिकों ने शस्त्रागार लूट लिया। अंग्रेज सैनिक अधिकारियों मेजर स्पोटिसवुड और कर्नल न्यू बारी की हत्या कर दी गई। लेफ्टिनेंट लॉक तथा कप्तान हार्डी घायल हो गए। अंग्रेज अधिकारियों ने नसीराबाद से भागकर ब्यावर में शरण ली। चर्च और अधिकारियों के बंगले में आग लगा दी गई। खजाने की तिजोरियां तोड़ दी गई पर इन विद्रोही सैनिकों ने 4 ब्रिटिश अधिकारियों के अलावा रक्त की एक बूंद भी नहीं बहाई।

छावनी को तहस–नहस करने के बाद विप्लवी सैनिकों ने अविलम्ब दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। 18 जून, 1857 ई. को विप्लवी दिल्ली पहुंच गए और दिल्ली में डेरा डाले अंग्रेजी पलटन पर पीछे से आक्रमण किया, जिसमें अंग्रेज परास्त हुए।

नीमच में क्रांति :

नसीराबाद की क्रांति की सूचना जब नीमच पहुंची, तो 3 जून, 1857 ई. को नीमच के सैनिकों ने भी विद्रोह कर दिया। क्रांतिकारियों ने छावनी को लूट लिया तथा उसमें आग लगा दी। नीमच छावनी को लूटने के बाद क्रांतिकारी नीमच से रवाना होकर सरकारी बंगलों को लूटते हुए और उनमें आग लगाते हुए शाहपुरा पहुंचे। शाहपुरा के शासक ने क्रांतिकारियों को भोजन व ठहरने की सुविधा प्रदान की। इसके पश्चात् क्रांतिकारी निम्बाहेड़ा पहुंचे, जहां की जनता ने इनका बड़ा स्वागत किया। तत्पश्चात क्रांतिकारी यहां से देवली, टोंक व आगरा होते हुए दिल्ली पहुंचे। मार्ग में अनेक स्थानों पर जनता ने क्रांतिकारियों का स्वागत किया तथा क्रांतिकारियों की संख्या में भी काफी वृद्धि हो गई।

नीमच से क्रांतिकारियों के चले जाने के पश्चात ए.जी.जी. लॉरेन्स के निर्देश पर कप्तान शॉवर्स ने कोटा, बूंदी और मेवाड़ की राजकीय फौजों की सहायता से 8 जून, 1857 ई. को नीमच पर पुनः अधिकार कर लिया।

एरिनपुरा और आउवा की क्रांति :

अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा उठाने और उनकी सत्ता को चुनौती देने का काम मारवाड़ के जागीरदारों ने किया। एरिनपुरा में स्थित जोधपुर की सैनिक टुकड़ी को जब नसीराबाद में हुई क्रांति की सूचना मिली, तो उसने भी 21 अगस्त 1857 ई. को क्रांति का बिगुल बजा दिया। क्रांतिकारियों ने एरिनपुरा स्टेशन को लूटा और मारवाड़ के रास्ते दिल्ली की ओर रवाना हो गए। जब क्रांतिकारी पाली पहुंचे, तो आउवा (पाली जिले में स्थित एक गांव) के ठाकुर कुशाल सिंह ने उन्हें अपनी सेवा में ले लिया। आउवा का ठाकुर मारवाड़ का शक्तिशाली सामन्त था। वह अंग्रेजों एवं जोधपुर के महाराजा दोनों का विरोधी था। ऐसा कहा जाता है कि मेवाड़ और मारवाड़ के अनेक सामन्त अपनी सेनाएं लेकर कुशाल सिंह की सहायता के लिए आउवा आ पहुंचे।

जोधपुर के महाराजा ने सिंघवी कुशलराज के नेतृत्व में एक फौज अंग्रेजों का दमन करने हेतु आउवा भेजी। 8 सितंबर 1857 ई. को आउवा के ठाकुर व क्रांतिकारियों की संयुक्त सेना ने जोधपुर की राजकीय फौज को पराजित कर दिया। इस संघर्ष में किलेदार अनार सिंह मारा गया तथा सिंघवी कुशलराज जान बचाकर वहां से भाग खड़ा हुआ। जोधपुर फौज की तोपें व बहुत सारी युद्ध सामग्री क्रांतिकारियों के हाथ लग गई। इस घटना के कुछ समय पश्चात ही ए.जी.जी. लॉरेन्स एक सेना लेकर स्वयं आउवा आया। 18 सितंबर को लॉरेन्स की सेना व क्रांतिकारियों के बीच भीषण संघर्ष हुआ, जिसमें लॉरेन्स को पराजय का सामना करना पड़ा। ब्रिटिश फौज को परास्त करने के बाद क्रांतिकारी दिल्ली की ओर कूच कर गए।

जॉर्ज लॉरेन्स आउवा की पराजय को भूला नहीं था। इसलिए आउवा के ठाकुर से बदला लेने के लिए उसने ब्रिगेडियर होम्स के नेतृत्व में एक विशाल सेना आउवा की ओर भेजी। 20 जनवरी 1858 ई. को ब्रिगेडियर होम्स ने आउवा पर आक्रमण कर दिया। दोनों सेनाओं के बीच भीषण संघर्ष हुआ। इस संघर्ष के दौरान ठाकुर कुशाल सिंह आउवा के किले को छोड़कर सलूम्बर चला गया। उसके जाते ही ब्रिटिश फौजों ने आउवा के किले पर अपना अधिकार कर लिया। अंग्रेजों में बदले की भावना इतनी प्रबल थी कि उन्होंने पूरे गांव को बुरी तरह लूटा तथा आउवा के किले को बारूद से उड़ा दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने आउवा के मंदिरों और मूर्तियों को पूरी तरह नष्ट कर दिया तथा वहां के निवासियों पर भीषण अत्याचार किए।

मेवाड़ में क्रांति की गूंज :

इस समय मेवाड़ की जनता में भी अंग्रेजों के विरुद्ध काफी रोष था। मेवाड़ के अधिकांश सामन्त ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध थे। नसीराबाद में हुई क्रांति की सूचना उदयपुर पहुंच चुकी थी। अतः मेवाड़ की फौजें भी अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए लगभग तैयार थी। किन्तु मेवाड़ के महाराणा की सूझबूझ ने तथा अंग्रेज कप्तान शॉवर्स के कठोर रुख ने स्थिति को बिगड़ने से संभाल लिया। इस समय महाराणा व कम्पनी की सरकार दोनों को ही मेवाड़ के सामन्तों से भय था, अतः दोनों एक दूसरे के साथ सहयोग

करने के लिए बाध्य थे। ए.जी.जी. के निर्देश पर मेवाड़ के महाराणा स्वरूप सिंह ने 27 मई 1857 को अपने सभी सामन्तों को पत्र भेजकर कहा कि वे ब्रिटिश सैनिक कार्रवाई में सहयोग करें तथा पोलिटिकल एजेन्ट कप्तान शॉवर्स के निर्देशों का पालन करें। दूसरी ओर कप्तान शॉवर्स ने विरोधी सामन्तों को चेतावनी देते हुए कहा कि जो भी शांति भंग करने का प्रयत्न करेगा, उसे कठोर दण्ड दिया जाएगा।

यहां तक कि सलूम्बर के रावत केसरी सिंह ने जब मेवाड़ के महाराणा के अधिकारों को चुनौती देते हुए कहा कि यदि आठ दिन में उसकी परम्परागत अधिकारों की मांग को स्वीकार नहीं किया गया, तो वह चित्तौड़ की गद्दी पर महाराणा के किसी प्रतिद्वन्दी को बैठा देगा, तब कप्तान शॉवर्स ने रावत केसरी सिंह को चेतावनी दी कि यदि उसने महाराणा के विरुद्ध किसी भी कार्रवाई में भाग लिया, तो उसे उसकी जागीर से अपदस्थ कर राजपूताने से ही निष्कासित कर दिया जाएगा। कप्तान शॉवर्स की इस धमकी से रावत केसरी सिंह शांत हो गये।

कोटा में क्रांति :

राजस्थान के राज्यों में हुई 1857 ई. की क्रांति में कोटा का महत्वपूर्ण स्थान है। कोटा में विद्रोह का मुख्य कारण यह था कि पोलिटिकल एजेन्ट मेजर बर्टन ने कोटा महाराव को यह सलाह दी कि कुछ अफसर वफादार नहीं हैं तथा उनका रवैया अंग्रेज विरोधी हैं। अतः वे ऐसे अफसरों को पदच्युत कर अंग्रेज अधिकारियों को सौंप दें, जिससे उन्हें उचित दण्ड दिया जा सके। मेजर बर्टन ने जिन अफसरों को सौंपने की मांग की थी, उनमें जयदयाल, रतनलाल, जियालाल आदि प्रमुख थे। मेजर बर्टन द्वारा महाराव को जो सलाह दी गई थी, वह किसी प्रकार महाराव की फौज तथा फौज के अधिकारियों पर प्रकट हो गई। फलस्वरूप फौज के सभी सिपाही क्रोध से पागल हो उठे और उन्होंने मेजर बर्टन से बदला लेने का निश्चय किया। तदनुसार 15 अक्टूबर 1857 ई. को कोटा के सैनिकों ने क्रांति का बिगुल बजा दिया।

कोटा के सैनिकों ने क्रांतिकारियों के साथ रेजीडेंसी को घेर लिया तथा उसमें आग लगा दी। क्रांतिकारियों ने मेजर बर्टन और उसके दोनों पुत्रों की हत्या कर दी। क्रांतिकारियों ने शहर में जुलूस निकाला और महाराव के महल को घेर लिया। महाराव अपने महल में एक प्रकार से कैद हो गए। फिर क्रांतिकारियों ने महाराव को एक संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया, जिसमें 9 शर्तें थीं। इनमें से एक शर्त यह थी कि मेजर बर्टन तथा उसके पुत्रों की हत्या स्वयं महाराव के आदेश से की गई है। महाराव को क्रांतिकारियों की इच्छानुसार व्यवहार करने के लिए तब तक विवश होना पड़ा, जब तक करौली से सैनिक सहायता प्राप्त नहीं हो गई।

क्रांतिकारियों का कोटा शहर पर लगभग 6 माह तक अधिकार रहा। उन्होंने सरकारी गोदामों, बंगलों, दुकानों, अस्त्र–शस्त्र के भण्डारों आदि को लूटा और उनमें आग लगा दी। उन्होंने जिले के विभिन्न कोषागारों को भी लूटा। ऐसा लगता है कि क्रांतिकारियों को कोटा रियासत के अधिकांश अधिकारियों का समर्थन और सहयोग प्राप्त हो गया था। क्रांतिकारियों ने शहर में लूटमार और अत्याचार कर नगर के लोगों में भीषण आतंक पैदा कर दिया था। यह स्थिति तब तक बनी रही, जब मेजर एच.जी. राबर्ट्स नसीराबाद से 5500 सैनिक लेकर 22 मार्च 1858 ई. को चम्बल के किनारे पहुंचा। उसने तोपों से क्रांतिकारियों पर धुंआधार गोले बरसाए और उन्हें कोटा से बाहर भागने पर विवश कर दिया। तब जाकर

कोटा क्रांतिकारियों के नियंत्रण से मुक्त कराया जा सका। क्रांतिकारी नेताओं तथा विद्रोही सैनिकों को अमानुषिक दण्ड दिए गए और जयदयाल को गिरफ्तार करके तोप से उड़ा दिया गया।

अन्य राज्यों में क्रांति की गूँज :

राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति केवल मारवाड़, मेवाड़ तथा कोटा तक ही सीमित नहीं रही, अपितु इसकी गूँज राजस्थान के अन्य राज्यों में भी सुनाई दी। भरतपुर, जो आगरा व मथुरा के काफी निकट है, क्रांति के समय अशांत रहा। मथुरा में विद्रोह हो जाने के बाद भरतपुर शहर में उत्तेजना फैल गई और भरतपुर की सेना ने भी क्रांति का बिगुल बजा दिया। भरतपुर के महाराजा ने वहां के पोलिटिकल एजेन्ट मेजर मॉरिसन को भरतपुर छोड़कर जाने की सलाह दी क्योंकि महाराजा को यह आशंका थी कि उसकी उपस्थिति से नीमच के क्रांतिकारी भरतपुर पर आक्रमण कर सकते हैं। महाराजा की सलाह पर मेजर मॉरिसन भरतपुर छोड़कर चला गया। क्रांति की अवधि में भरतपुर रियासत की स्थिति बड़ी विषम थी। क्रांतिकारी सैनिकों की अनेक टुकड़ियां भरतपुर की सीमा से होकर गुजरीं। भरतपुर की गूजर व मेवाती जनता क्रांति में पीछे नहीं रही, उसने खुलकर क्रांति में भाग लिया। जब पड़ोसी आगरा जिले में अंग्रेजों की शक्ति वहां के लाल किले की चारदीवारी तक सीमित हो गई, तो भरतपुर की जनता के मन में यह विश्वास भर गया कि अब भारत में 'ब्रिटिश सत्ता' समाप्त होने जा रही है।

अलवर में भी, दिल्ली के कुछ क्रांतिकारियों के आ जाने के कारण क्रांतिकारी गतिविधियां पनपने लगी थीं। अलवर रियासत के गांवों के गूजरों ने अपने पड़ौसी राज्य भरतपुर की भांति ब्रिटिश विरोधी भावना का खुलकर प्रदर्शन किया। उन्होंने अपनी क्रांतिकारी गतिविधियों से शासकों को काफी परेशान किया।

धौलपुर रियासत में भी गम्भीर उपद्रव हुए। अक्टूबर 1857 ई. के प्रारम्भ में ग्वालियर और इन्दौर के क्रांतिकारियों की संयुक्त सेना धौलपुर में प्रविष्ट हो गई। क्रांतिकारियों के प्रति सहानुभूति के कारण धौलपुर रियासत की सेना तथा अनेक अधिकारी राजा का साथ छोड़कर क्रांतिकारियों से मिल गए, जिससे धौलपुर की सत्ता खतरे में पड़ गई। क्रांतिकारियों ने धौलपुर में खूब लूटमार की। उन्होंने वहां के राजा को घेरकर जान से मारने की धमकी दी। विवश होकर राजा को क्रांतिकारियों की मांगें स्वीकार करनी पड़ी। धौलपुर में इन क्रांतिकारियों ने राव रामचन्द्र और हीरालाल के नेतृत्व में राजा की अधिकांश

तोपों पर अधिकार कर लिया और उनकी सहायता से आगरा पर आक्रमण कर दिया। यह स्थिति तब तक बनी रही, जब दिसंबर में पटियाला के शासक द्वारा भेजी गई सेना की सहायता से धौलपुर में व्यवस्था स्थापित नहीं हो गई।

जयपुर में महाराजा को उनके एक पदाधिकारी राव शिवसिंह ने यह सलाह दी कि वे अंग्रेजों तथा मुगल बादशाह बहादुरशाह दोनों से मित्रतापूर्ण संबंध बनाए रखें। किन्तु उनके प्राइवेट सेक्रेटरी पं. शिवदीन ने महाराज पर अंग्रेजों का साथ देने के लिए जोर डाला। जयपुर में नवाब विलायत खाँ, मियां उस्मान खाँ और सादुल्ला खाँ मुगल सम्राट से मिलकर ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध क्रांति का षड्यंत्र रच रहे थे। मुगल सम्राट के साथ किए गए इनके पत्र व्यवहार की जानकारी महाराज को मालूम हो गई। अतः उन्होंने सादुल्ला खां को राज्य से निष्कासित कर दिया और शेष दोनों को बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया।

टोंक में भी नवाब की सेना ने मीर आलम खां के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। टोंक का नवाब अंग्रेजों के साथ था, मगर नवाब की सेना ने नीमच के क्रांतिकारियों को टोंक आने के लिए आमंत्रित किया और उनकी सहायता से नवाब के किले को घेर लिया। नवाब ने सैनिकों को डराने धमकाने का भरपूर प्रयास किया, किन्तु वह सफल नहीं हो सका।

सलूम्बर और कोठारिया का योगदान :

आउवा (जोधपुर) के ठाकुर कुशालसिंह से प्रेरणा लेकर मेवाड़ के दो प्रमुख सामन्तों सलूम्बर के रावत केसरीसिंह और कोठारिया के रावत ज्योतसिंह का 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम में अपूर्व योगदान रहा है। यह सही है कि मारवाड़ के सामन्तों की भांति मेवाड़ के सामन्तों ने खुलकर क्रांति में भाग नहीं लिया, किन्तु अंग्रेजों का विरोध करने वाले क्रांतिकारी नेताओं तथा ब्रिटिश सत्ता के विरोधी जागीरदारों को सलूम्बर और कोठारिया के रावतों ने अपने यहां शरण दी। उन्होंने क्रांतिकारियों के परिवारों को भी आश्रय दिया।

सलूम्बर के रावत केसरीसिंह ने आस–पास के जागीरदारों को साथ लेकर आउवा के ठाकुर के स्वतंत्रता यज्ञ में भरपूर सहायता की। उदयपुर के महाराणा ने कम्पनी सरकार के साथ जो संधि की, केसरीसिंह ने उसका खुलकर विरोध किया। ए.जी. लॉरेन्स ने केसरीसिंह की ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों को देखकर महाराणा उदयपुर पर यह दवाब डाला कि वे उसके विरुद्ध कार्रवाई करें, किन्तु महाराणा उसके विरुद्ध कार्रवाई करने का साहस नहीं जुटा सके। अंग्रेजों द्वारा आउवा गांव को तहस नहस कर दिया गया तथा आउवा के ठाकुर कुशालसिंह निरीह अवस्था में इधर–उधर भटक रहे थे, तब कोठारिया के रावत ज्योतसिंह ने उनको गले लगाया। उन्होंने कोठारिया में पेशवा नाना साहब और उनके परिवार को भी शरण दी तथा सब प्रकार की सुख–सुविधा उपलब्ध कराई। इस प्रकार ब्रिटिश सत्ता का विरोध कर व भावी परिणामों की चिन्ता न कर सलूम्बर व कोठारिया के रावतों ने अपूर्व त्याग और साहस का परिचय दिया।

अगस्त 1858 ई. तक समस्त भारत में विद्रोह कुचल दिया गया। नवंबर 1858 ई. में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत का शासन ब्रिटिश ताज को सौंप दिया। ब्रिटेन की महारानी विक्टोरिया की ओर से भारत

के सभी नरेशों के अधिकारों एवं विशेषाधिकारों को सुरक्षित रखने का आश्वासन दिया गया। उदयपुर महाराणा ने इसका स्वागत किया और अंग्रेजों के सम्मान में भव्य दावत दी गई।

यद्यपि राजस्थान में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम असफल रहा, परन्तु विप्लव के बाद राजस्थान के परम्परागत ढ़ांचे का स्वरूप बदलने लगा। आधुनिक शिक्षा का प्रसार, नए मध्यम वर्ग का जन्म, प्रशासनिक सेवाओं में जनसाधारण की नियुक्तियां, वैश्य समुदाय का सहयोग लिया जाने लगा। इन्हें महत्वपूर्ण पद और विभिन्न प्रकार के संरक्षण देना आदि कुछ इस तरह के कार्य होने लगे, जिससे राजपूतों का महत्व कम होता गया। राजस्थान के नरेश और जागीरदार अब अंग्रेजों पर पूरी तरह से निर्भर हो गए।

1857 की क्रांति की असफलता के कारण :

(1) राजस्थान के राजाओं ने अंग्रेजों के प्रति अपनी झुकने की प्रवृत्ति का परिचय दिया। जयपुर, अलवर, भरतपुर, धौलपुर, करौली, सिरोही, टोंक, बीकानेर, डूंगरपुर, बांसवाड़ा और प्रतापगढ़ के शासकों ने विप्लव की आंधी को रोकने के लिए ब्रिटिश सत्ता को सहयोग दिया। मुगल सम्राट बहादुर शाह तथा स्थानीय विद्रोहियों ने राजस्थानी राजाओं को स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व प्रदान करने हेतु आमंत्रित किया, पर इसके बाद भी उन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया।

(2) राजस्थान के विद्रोहियों में आपसी एकता और सम्पर्क का अभाव था। कोटा, नसीराबाद, भरतपुर, धौलपुर, टोंक आदि में अलग अलग समय पर क्रांति होने के कारण अंग्रेजों को विद्रोहियों से निपटने का अवसर मिल गया।

(3) मारवाड़, मेवाड़ और जयपुर आदि के नरेशों ने तांत्या टोपे को किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया।

(4) राजस्थान की 18 रियासतों में संगठन और एकता का अभाव था। नेतृत्व के लिए जब मेवाड़ के महाराणा से सम्पर्क किया, तो नेतृत्व प्रदान करने के बजाय उन्होंने शासकों के पत्र–व्यवहार संबंधी सारे कागजात ही ब्रिटिश अधिकारियों को सौंप दिए।

(5) राजस्थान अनेक देशी रियासतों में बंटा हुआ था। इस कारण उसमें क्रांतिकारियों का कोई केन्द्रीय संगठन नहीं था। उनमें नेतृत्व का भी सर्वथा अभाव था। क्रांतिकारियों के बीच आपस में सम्पर्क भी नहीं रहा था। उनमें त्याग और बलिदान की भावना तो थी, किन्तु उनमें न तो अंग्रेजों जैसा रणकौशल ही था और न वे अंग्रेज सैनिकों के समान प्रशिक्षित थे। इसके अतिरिक्त क्रांतिकारियों को धन, रसद और हथियारों की कमी का भी सामना करना पड़ा।

(6) अंग्रेजों ने अन्य क्षेत्रों में हुई क्रांति का दमन करते हुए जून 1858 ई. तक उत्तर भारत के अधिकांश भागों पर पुनः अपना नियंत्रण कर लिया। इस कारण उन्होंने राजस्थान में हुई क्रांति का दमन करने के लिए अपनी पूरी शक्ति लगा दी।

1857 की क्रांति की असफलता के परिणाम :

(1) सन् 1857 की क्रांति के असफल होने के बाद राजस्थान की रियासतें ब्रिटिश संरक्षण में चली गई।

(2) ब्रिटिश सम्राट ने राजस्थान की सभी रियासतों में कम्पनी द्वारा की गई संधियां जारी रखी।

(3) राजस्थान की जनता पर अब गुलामी का दोहरा अंकुश हो गया। एक तो वे रियासती राजाओं के अधीन थे, दूसरे अंग्रेजों का भी उन पर नियंत्रण हो गया। परिणामस्वरूप यह निश्चित हो गया कि निकट भविष्य में राजस्थान में स्वतंत्रता आंदोलन का कोई भविष्य नहीं है।

(4) अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के कारण भी लोगों में राष्ट्रीय जागृति का प्रादुर्भाव हुआ। स्वधर्म, स्वदेशी, स्वराज, स्वभाषा के फलस्वरूप लोगों में क्रांति की भावना पुनः पल्लवित हुई। इस भावना का बल प्रदान करने वालों में अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, गोपालसिंह खरवा आदि अग्रणी माने जाते हैं। इस क्रांति की असफलता ने भावी संगठित आंदोलन की भूमिका तैयार कर दी।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. 1823 ई. में अंग्रेजों ने सबसे अंत में राजस्थान के किस रियासत के साथ संधि की?
2. 1857 ई. की क्रांति आरंभ होने के समय राजस्थान में कहाँ–कहाँ सैनिक छावनियां थीं?
3. राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति का आरम्भ किस दिनांक को हुआ?
4. राजस्थान के उन तीन प्रमुख स्थानों का नाम लिखिए, जहाँ 1857 ई. के सैनिक विद्रोह हुए ?
5. राजस्थान के उन तीन राजाओं के नामों का उल्लेख कीजिए, जिन्होंने 1857 ई. की क्रांति में क्रांतिकारियों का सहयोग किया?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. राजस्थान में अंग्रेजी साम्राज्य के आरंभिक विस्तार पर प्रकाष डालिए।
2. राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति के आरंभ के प्रमुख कारणों को संक्षेप में समझाइए।
3. राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति में मेवाड़ के योगदान का वर्णन कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न :

1. राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति के दौरान हुए विभिन्न सैनिक विद्रोहों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. राजस्थान में 1857 ई. की क्रांति के दौरान स्थानीय षासकों की भूमिका की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

अध्याय

2

राजस्थान के क्रांतिकारी

दिल्ली की बादशाहत के विघटित होने के बाद ही यहां अंग्रेजों को अपने पाँव पसारने का अवसर मिला। राजस्थान में सामन्तवाद के सबसे क्रूर और घृणित रूप अंग्रेजों के शासनकाल की देन है। परंतु इस काल के आरम्भ होने के साथ ही उस शासन का विरोध भी आरम्भ हो गया था।

इस दौर की अनेक साम्राज्य विरोधी कविताओं का संबंध भरतपुर से है। मराठा सरदार होलकर ने यहां शरण ली थी। भरतपुर के राजा रणजीत सिंह ने अंग्रेजों से संधि के बावजूद होलकर को अंग्रेजों के हवाले करने से इन्कार कर दिया। इस पर अंग्रेजों ने भरतपुर पर हमला किया।

आछो गोरा हट जा।
राज भरतपुर को रै गोरा हट जा।
भरतपुर गढ़ बाँको, किलो रे बाँको।
गोरा हट जा।

भरतपुर से संबंधित एक कविता कविराजा बाँकीदास की है। वह जोधपुर नरेश मानसिंह के राजकवि और उनके काव्यगुरु थे। उनकी ग्रंथावली नागरी प्रचारिणी सभा से तीन खंडों में प्रकाशित हो चुकी है। इनकी लिखी तथा संकलित, राजस्थानी में 2700 ऐतिहासिक व़ातें भी हैं। विभिन्न भाषाओं की जानकारी के साथ–साथ इतिहास का भी इन्हें बहुत अच्छा ज्ञान था। इनका निधन 1833 ई. में हुआ।

उतन विलायत किलकता कानपुर आविया,
ममोई लंक मदरास मेला।
यलम धुर वहण अंग्रेज वाटन चला,
भरतपुर ऊपरा हुवा मेला।

विलायत से आकर अंग्रेज अपने इल्म के बल पर कलकत्ता, कानपुर, बंबई, मद्रास तक अधिकार करता चला गया और अब वह भरतपुर पर चढ़ आया। ये सब नगर जिस देश में हैं, उसका नाम भरतखंड है। अंग्रेजों ने जो फौज बटोरी है, वह इसी देश के विभिन्न प्रदेशों के लोगों से बनी है।

सैन रिजमंट असंख मलटणां तणे संग
भड़ तिलंक बंग किलंग तणा मिलिया
अभंग जंग भरतखंड पारका ऊसर ऊवै,
मारका वजंद्र रै दुरंग मिलिया।

कविराजा बांकीदास

कविता में उल्लास का स्वर है क्योंकि अंग्रेज आक्रमणकारी विजयी न हुए थे। गीत की दो मजेदार पक्तियां हैं–

थया वलहीण लसकर फिरंगथांन रा,
चीण इनॉन रा इलम चलिया।

फिरंगिस्तान का लश्कर बलहीन हो गया, चीन और यूनान से जो इल्म सीखा था, वह व्यर्थ हो गया। भारत के सामन्त बिना लड़े ही अपनी भूमि शत्रु को सौंपते जाते है, इससे कवि बाँकीदास बहुत दुखी थे। इन सामन्तों में राजस्थान के सामन्त सबसे आगे थे।

आयौ इंगरेज मुलक रै ऊपर, आहँस लीधा खैंचि उरा।
धणियाँ मरै न दीधी धरती, धणियाँ ऊभो गई धरा।

अंग्रेज मुल्क पर चढ़ आया। उसने देश का सत खींच लिया। अब के स्वामियों के कभी प्राण रहते भी धरती उनके हाथ से निकल गई। गीत के अंत में राज्यों के नाम लेकर कवि ने उनके स्वामियों को फटकारा है :

पुर जोधाण, उदैपुर, जैपुर, यह थाँरा खूटा परियाण।

आँके गई आवसी आँके, बाँके आसल किया बखांण।

जोधपुर, उदयपुर, जयपुर आदि ने अपने गौरव का नाश कर दिया। 'देश को गुलाम होना था और वह हो गया। जब आजाद होना होगा, तब हो जाएगा। तुम्हारे किए अब कुछ नहीं होने का। सच्ची बात को मैंने सच्चाई के तरीके से प्रकट कर दिया है।अंग्रेजों से संधि करके गद्दी बचाए रखने वाले सामन्त वास्तव में स्वाधीन नहीं हैं, यह तथ्य कवि बाँकीदास के सामने स्पष्ट है। आगे स्थिति बदलेगी, यह आशा भी उन्हें है।

सन् 1857 ई. से पहले ब्रिटिश फौज के कुछ सैनिकों ने राजस्थान में विद्रोह किया था। इस प्रसंग में डूंगजी और जवाहरजी प्रसिद्ध हुए और उन पर लोकगीत रचे गए। राजस्थान स्वतंत्रता संग्राम काव्य में दिए हुए विवरण के अनुसार 1818 ई. में अंग्रेजों ने संधि की। शेखावटी क्षेत्र के लोगों ने इसका विरोध किया। विरोध के दमन के लिए अंग्रेजों ने शेखावटी ब्रिगेड संगठित किया। 1834 ई. में डूंगजी के नेतृत्व में इस ब्रिगेड के कुछ सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। 1838 ई. में अंग्रेजों ने डूंगजी को पकड़ लिया और उन्हें आगरे के किले में कैद कर लिया। जवाहरजी ने अपने सहयोगियों को लेकर किले पर हमला किया और डूंगजी को छुड़ा लिया। वहां से निकल कर इन्होंने नसीराबाद की छावनी पर हमला किया और अंग्रेजों का खजाना लूट लिया। इससे उनके साहस और शौर्य की गाथा सर्वत्र फैल गई। अनेक समकालीन कवियों ने उन पर अनेक कविताएं लिखी। लोक में उनसे संबंधित गाथा, जो छावनी के नाम से प्रसिद्ध है, गाई जाने लगी। अंग्रेजों के विरुद्ध वीरतापूर्ण कार्यो से प्रेरित होकर जो लोक कविता रची गई, वह इस तरह राजस्थान की जनता के नवजागरण का माध्यम बनी।

1857 ई. का स्वागत कवि सूर्यमल्ल (अथवा सूरजमल) ने किया।

बीरम बरसाँ बीतियो, गण चौचंद गुणीस।

बिसहर तिथ गुरु जेठ बद समय पलट्टी सीस।

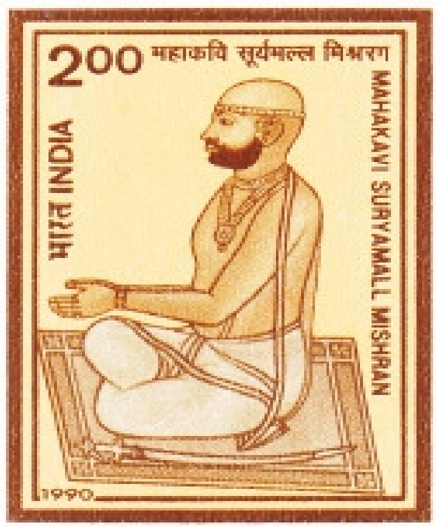

महाकवि सूर्यमल्ल

“हिन्दुस्तान में अब कुछ परिवर्तन हो, अब कुछ उथल–पुथल हो, इसी आशा–आकांक्षा में संवत उन्नीस सौ चौदह का एक वर्ष तो मानो युग के समान लंबा होकर आखिर बीत गया। पर नए साल के आरंभ होते ही जेठ बदि पाँचम व गुरुवार के दिन (सन् 1857) समय रूपी विषधर नाग ने (अंग्रेजों की देह में) अपने जहरीले दांत गड़ा कर एकदम पलटा खाया।” जेठ में न तो संवत् 1914 ई. समाप्त हो सकता है, न 1857 ई. आरंभ हो सकता है। संभवतः जेठ बदी पंचमी वह दिन है जब युद्ध आरंभ हुआ। काल सर्प ने अंग्रेजों को डस कर उस दिन पलटा खाया। स्वाधीनता संग्राम शुरु होते ही किसी कवि की यह भावात्मक प्रतिक्रिया इतिहास में अभूतपूर्व है। इसके बाद सूर्यमल्ल जनता को संघर्ष के लिए प्रेरणा देते हुए और भी दोहे लिखते रहे।

सूर्यमल्ल की उत्कृष्ट कृति वीर सतसई के संपादकों ने उसकी भूमिका में कवि पर सन् सत्तावन के संग्राम का प्रभाव स्वीकार करते हुए लिखा है : “जिस समय सतसई का निर्माण हुआ, उस समय देश में 1857 ई. के विद्रोह की ज्वाला भड़क रही थी। सारा देश विदेशी सत्ता का तख्ता पलटने के लिए व्यग्र हो उठा था। गदरकालीन परिस्थिति का कवि पर बड़ा स्फूर्तिदायक प्रभाव पड़ा था। लोगों को प्रेरणा देने के लिए जो कुछ उन्होंने लिखा पढ़ी की, वह सब तात्कालिक परिस्थितियों के दवाब के कारण पोशीदा रुप में हुई। सूर्यमल्ल स्वाधीनता संग्राम से प्रभावित होने वाले साहित्यकार के अलावा उसके राजनीतिक संगठनकर्ता भी थे।

सन् सत्तावन में बड़े सामन्तों ने आम तौर से अंग्रेजों का साथ दिया, छोटे सामंतों ने जनता का साथ दिया। देशी पलटनों के विद्रोही सैनिकों ने इन सामन्तों को साथ लेकर अंग्रेजों से युद्ध किया। यह विशेषता आउवा के युद्ध में साफ दिखाई देती है। आउवा के संघर्ष पर रचे जाते, यह स्वाभाविक था। एक गीत यों शुरु होता है :

वणिया वाली गोचर माँय, कालो गो दड़ियो गो,
राजा जी रै भेजो तो फिरंगी लड़ियो ओ,
काली टोपी रो।
हे ओ, काली टोपी रो, फिरंगी फैलाव कीधो ओ,
काली टोपी रो।

“आउवे की धरती पर फिरंगी आ धमका है। उसको बाहर खदेड़ने के लिए गांव की गोचर में काले सिपाही डटे हुए हैं। फिरंगी का पक्ष लेकर उसके साथ हमारा राजा भी चढ़ आया है। गोरी देह वाला यह फिरंगी निरंतर फैलाव करता जा रहा है।”

ऐसे ही एक कवि गिरवरदान थे। इन्होंने आउवा के युद्ध पर तीन छप्पय लिखे थे। पहली पंक्ति है :

बरती चवदह बरस, पड़ै इल बेध अपाएँ।

यहां सन् 1857 ई. में धरती पर जो उथल–पुथल हुई, उसकी ओर संकेत है। अंतिम पंक्ति है

आजाद हिंद करवा उमंग, निडर आउवा नाथ रै।

यहां कवि ने बड़ी सूझबूझ से आउवा के स्थानीय संघर्ष को सारे भारत की आजादी की लड़ाई

से जोड़ा है। बंगभंग के बाद स्वदेशी आंदालन ने जोर पकड़ा, इसके साथ ही सशस्त्र क्रांति के प्रयास आरंभ हुए। ये प्रयास राजस्थान में भी हुए। इनकी विशेषता यह है कि वे आरंभ से ही समाज सुधार और शिक्षा प्रसार से जुड़े रहे। क्रमशः उन्होंने किसानों को आधार बनाकर जन–आंदोलनों का रूप लिया। यद्यपि उनका क्षेत्र सीमित था, फिर भी उन्होंने देश के सामने मिसाल रखी।

डूंगजी–जवाहरजी, सीकर :

1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम में सीकर क्षेत्र के काका–भतीजा डूंगजी–जवाहरजी प्रसिद्ध देशभक्त हुए। डूंगजी शेखावटी ब्रिगेड में रिसालेदार थे। बाद में वे नौकरी छोड़कर धनी लोगों से देश की आजादी के लिये धन मांगने लगे और धन नहीं मिलने पर उनके यहाँ डाका डालने लगे। इस धन से वे निर्धन व्यक्तियों की भी सहायता करते। इन दोनों ने अपने साथियों की सहायता से कई बार अंग्रेज छावनियों को भी लूटा। डूंगजी के साले भैरूसिंह ने डूंगजी को भोजन पर अपने यहाँ बुलवाया और वहाँ अत्यधिक शराब पिलाकर उन्हें पकड़वा दिया। अंग्रेजों ने उन्हें आगरा के दुर्ग में बंद कर दिया। डूंगजी की पत्नी की फटकार से जवाहरजी ने उन्हें छुड़वाने की प्रतिज्ञा की। कहा जाता है कि लोटिया जाट और करणा मीणा अपनी वीरता और बुद्धिमता से डूंगजी को छुड़वाकर लाए।

डूंगजी–जवाहरजी

बीकानेर के पास घड़सीसर में अंग्रेजी फौज ने बीकानेर और जोधपुर राज्य की फौजों के साथ मिलकर डूंगजी–जवाहरजी को घेर लिया। जवाहरजी तो भागकर बीकानेर रियासत के खैरखट्टा स्थान पर पहुंच गए, जहाँ महाराज रतनसिंह ने उन्हें प्रेमपूर्वक रखा। डूंगजी जैसलमेर में गिरदड़ा की काकीमैडी पहुंच गए, जहाँ जोधपुर की सेना ने उन्हें छलपूर्वक कैद करके अंग्रेज सेना को सौंप दिया। इससे लोगों में असंतोष की ज्वाला भड़क उठी। अंग्रेजों ने डूंगजी को वापस जोधुपर राज्य की सेना को सौंप दिया। जोधपुर के दुर्ग में ही डूंगजी का निधन हुआ।

लोठूजी निठारवाल, सीकर (1804–1855 ई.) :

लोठू निठारवाल का जन्म जाट परिवार में 1804 ई. में रींगस में हुआ था, जहाँ से वह, वहाँ के ठाकुर से अनबन होने के कारण अपनी बहन के पास बठोठ में आ गए। यहाँ इनका सम्पर्क डूंगजी –जवाहरजी से हुआ।

जब डूंगजी को अंग्रेजों ने गिरफ्तार करके आगरा की जेल में बंद कर दिया था, तो लोठू ने बालू नाई, सांखू लुहार व करणा मीणा आदि के साथ मिलकर डूंगजी को आगरा से रिहा करवाने की योजना बनाई और अंग्रेजों को चकमा देने के लिए अपने साथियों के साथ एक बारात के रूप में आगरा पहुँचे तथा अदम्य साहस का परिचय देते हुए डूंगजी को रिहा करवा लाए। इसके बाद लोठूजी, डूंगजी, जवाहरजी के साथ अंग्रेज विरोधी गतिविधियों को अंजाम देते रहे। 1855 ई. में इनकी मृत्यु हो गई।

अमरचंद बांठिया, बीकानेर (1793–1858) :

देश के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (1857 ई.) में राजस्थान के प्रथम व्यक्ति जिन्हें ब्रिटिश सत्ता ने फाँसी पर लटकाया, वह राजस्थान निवासी अमरचंद बांठिया था, जो ग्वालियर में अपना व्यापार चलाता था। उन्होंने अपनी पूरी धन–सम्पत्ति ताँत्या टोपे को देने का प्रस्ताव किया जिससे वह आजादी की लड़ाई को चालू रख सके। यही कुर्बानी बाद में उनकी फांसी का कारण बनी।

विजयसिंह पथिक (1882–1954), बिजौलिया :

भारत के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी भूपसिंह (विजयसिंह पथिक) का जन्म 1882 में ग्राम गुठावली, जिला बुलन्दशहर (उत्तर प्रदेश) में हुआ एवं इनकी कर्मभूमि राजस्थान थी। विजय सिंह पथिक 'वीर भारत सभा' एवं 'राजस्थान सेवा संघ' के संस्थापक एवं सम्पूर्ण भारत में किसान आंदोलन के जनक व चोटी के क्रान्तिकारी थे, जिनका गहरा सम्बन्ध बिजौलिया किसान आन्दोलन से था। अजमेर में सशस्त्र क्रान्ति की क्रियान्विति, क्रान्तिकारियों की भर्ती व प्रशिक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। साथ ही 'राजस्थान केसरी', 'नवीन राजस्थान', तरुण राजस्थान' आदि समाचार पत्रों के माध्यम से राजस्थान में जनजागृति फैलाने में अग्रणी भूमिका निभाई।

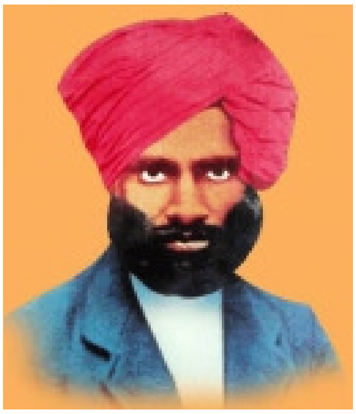

विजयसिंह पथिक

अर्जुनलाल सेठी (1880–1941) जयपुर :

राजस्थान में स्वतंत्रता आंदोलन के प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी एवं क्रांतिकारी अर्जुनलाल सेठी की जन्मभूमि जयपुर थी। अर्जुनलाल सेठी ने राजस्थान में सशस्त्र क्रांति और जनजागृति का अलख जगाया। सेठी ने जयपुर में सन् 1905 ई. में 'जैन शिक्षा प्रचारक समिति' की स्थापना की और उसके तत्वावधान में 'वर्धमान विद्यालय', 'वर्धमान छात्रावास' और 'वर्धमान पुस्तकालय' चलाए, जो क्रान्तिकारियों के प्रशिक्षण

केन्द्र थे। तत्कालीन जयपुर के महाराजा सवाई माधोसिंह द्वितीय ने उन्हें राज्य का प्रधानमंत्री बनाने का पेशकश की थी, किन्तु राष्ट्रप्रेम के कारण उन्होंने इसे यह कहते हुए इन्कार कर दिया कि ''अर्जुनलाल नौकरी करेगा, तो अंग्रेजों को भारत से कौन निकालेगा।''

अर्जुनलाल सेठी

सेठी ने देश में भावी क्रान्ति के लिये युवकों को तैयार किया। जोरावर सिंह, प्रतापसिंह, माणिकचन्द्र, मोतीचन्द, विष्णुदत्त आदि क्रान्तिकारी इन्हीं के विद्यालय से जुड़े थे। सेठी हार्डिंग बम काण्ड, आरा हत्याकाण्ड, काकोरी कार्रवाई से सम्बद्ध थे।

अजमेर में रहते हुए 'शूद्र मुक्ति', 'स्त्री मुक्ति', 'महेन्द्र कुमार' आदि पुस्तकें लिखी। इन्होंने हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करने का प्रयास किया।

केसरीसिंह बारहठ (1872–1941), शाहपुरा :

राजस्थान के प्रसिद्ध कवि एंव क्रान्तिकारी केसरीसिंह बारहठ की जन्मभूमि शाहपुरा एवं कर्मभूमि कोटा थी। इनका जन्म 1872 में शाहपुरा रियासत के 'देवपुरा' नामक गांव में हुआ।

सन् 1903 में वायसराय लार्ड कर्जन द्वारा आहूत दिल्ली दरबार में शामिल होने से रोकने के लिए उन्होंने उदयपुर के महाराणा फतेह सिंह को संबोधित करते हुए 'चेतावनी रा चूंगटिया' नामक तेरह सौरठे लिखे जो उनकी अंग्रेजों के विरुद्ध भावना की स्पष्ट अभिव्यक्ति थी। ब्रिटिश सरकार की गुप्त रिपोर्टों में राजपूताना में विप्लव फैलाने के लिए केसरी सिंह बारहठ व अर्जुन लाल सेठी को खास जिम्मेदार माना गया ।

उन्होंने राजस्थान के सभी वर्गों को क्रान्तिकारी गतिविधियों से जोड़ने के लिए 1910 ई. में 'वीर भारत सभा' की स्थापना की। राजस्थान में सशस्त्र क्रान्ति का संचालन किया तथा स्वतंत्रता की आग में अपने सम्पूर्ण परिवार को झोंक दिया। श्री बारहठ ने अपने सहोदर जोरावर सिंह, पुत्र प्रतापसिंह एवं जामाता ईश्वरदान आसिया को रासबिहारी बोस के सहायक मास्टर अमीरचन्द की सेवा में क्रांति का व्यावहारिक अनुभव और प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए भेज दिया।

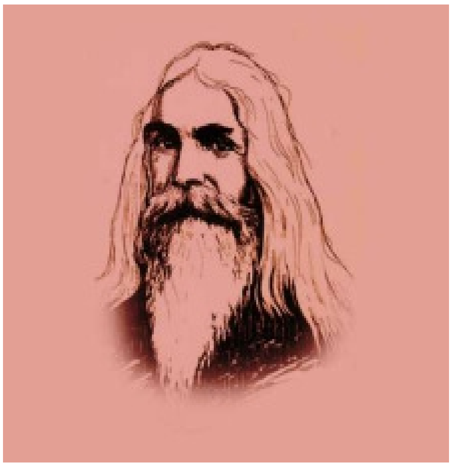

केसरीसिंह बारहठ

देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सब कुछ होम कर देने वाले क्रांतिकारी कवि केसरी सिंह ने अगस्त, 1941 को अंतिम सांस ली।

कुंवर प्रतापसिंह बारहठ (1893–1918) शाहपुरा :

1893 ई. में शाहपुरा में जन्मे कुंवर प्रतापसिंह को देशभक्ति विरासत में मिली थी। इनके पिता केसरी सिंह बारहठ एवं चाचा जोरावर सिंह बारहठ प्रसिद्ध क्रांतिकारी थे। क्रांतिकारी मास्टर अमीरचंद से प्रेरणा लेकर देश को स्वतंत्र करवाने में जुट गए। वे रासबिहारी बोस का अनुसरण करते हुए क्रांतिकारी आंदोलन में सम्मिलित हुए। रास बिहारी बोस का प्रताप सिंह पर बहुत विश्वास था।

प्रतापसिंह बारहठ को बनारस काण्ड के संदर्भ में गिरफ्तार किया गया और सन् 1917 में बनारस षड्यंत्र अभियोग चलाकर उन्हें 5 वर्ष के सश्रम कारावास की सजा हुई। बरेली के केंद्रीय कारागार में उन्हें अमानवीय यातनाएं दी गई, ताकि अपने सहयोगियों का नाम उनसे पता किया जा सके, किन्तु उन्होंने किसी का नाम नहीं लिया।

प्रताप सिंह बारहठ

भारत सरकार के गुप्तचर निदेशक सर चार्ल्स क्लीवलैण्ड ने प्रताप को घोर यातना दी। मगर यह सब भी प्रताप को नहीं तोड़ पाए। बरेली जेल में ही क्लीवलैण्ड ने प्रतापसिंह से राज उलगवाने के लिए कहा कि 'तुम्हारी मां तुम्हारे लिए बहुत रोती है'। तब प्रताप ने जवाब दिया – '' लेकिन मैं सैंकड़ों माताओं के रोने का कारण नहीं बन सकता। मेरी मां को रोने दो – जिससे अन्य कोई न रोए। '' अमानुषिक यातनाओं के कारण 1918 ई. में मात्र 22 वर्ष की आयु में प्रताप सिंह शहीद हो गए। हार कर क्लीवलैण्ड को यह कहना पड़ा, 'मैंने आज तक प्रताप सिंह जैसा युवक नहीं देखा।'

बालमुकुन्द बिस्सा, जोधुपर (1908–1942) :

इन्होंने नागौर में ' चरखा संघ' एवं 'खद्दर भण्डार' की स्थापना कर इनका प्रचार –प्रसार किया। ' राजस्थान के जतिनदास' बालमुकुन्द बिस्सा का जन्म 1908 में डीडवाना तहसील के पीलवा गांव में एक साधारण परिवार में हुआ। 1942 ई. में जयनारायण व्यास के नेतृत्व में शुरू हुए जनान्दोलन के दौरान बिस्सा को 9 जून, 1942 को भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत बंदी बनाकर जेल में डाल दिया गया। जेल में राजनीतिक बंदियों से होने वाले दुर्व्यवहार के विरुद्ध बिस्सा ने लंबी भूख हड़ताल की। जेल में बंदियों के दमन और हड़ताल में बिस्सा बहुत कमजोर हो गए और उन पर लू का भी प्रकोप हो गया। 19 जून को उन्हें वार्ड से जेल अस्पताल भिजवाया गया जहां अधिकारियों की लापरवाही के कारण उनका उसी दिन निधन हो गया। बिस्सा के निधन का समाचार समूचे नगर में बिजली की तरह फैल गया और देखते – देखते अस्पताल व सामने लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गई। उस जमाने में लगभग एक लाख लोगों ने मीलों पैदल चलकर उनकी अन्त्येष्टि में भाग लिया।

सागरमल गोपा, जैसलमेर :

जैसलमेर में जन्में सागरमल गोपा जीवनपर्यन्त अपनी जन्मभूमि के दुःखों को दूर करते रहे। इन्होंने अत्याचारी निरंकुश राजशाही का कड़ा विरोध कर जैसलमेर राज्य में राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने के साथ साथ शिक्षा प्रसार पर विशेष जोर दिया। गोपा ने 'आजादी के दीवाने' 'रघुनाथ सिंह का मुकदमा' एवं 'जैसलमेर का गुण्डाराज' पुस्तकें छपवाकर वितरित की जिनमें जैसलमेर राजशाही के काले कारनामों की लम्बी सूची एवं उनकी कटु आलोचना की। इसके लिए इनको राज के कोप का भाजन बनना पड़ा।

सागरमल गोपा

इन्हें राजद्रोह के आरोप में 24 मई, 1941 ई. को जेल में डालकर इन पर अमानवीय अत्याचार किए गए। जेल में अप्रैल, 1946 में इन पर तेल छिड़ककर आग लगाकर इन्हें अत्याचारी सत्ता ने जीवित ही जला दिया।

नानाभाई खांट, रास्तापाल (डूंगरपुर) :

डूंगरपुर प्रजामण्डल ने उत्तरदायी शासन की स्थापनार्थ एवं रियासती अत्याचारों के विरुद्ध 1947 ई. में आन्दोलन चलाया जिसे माणिक्यलाल वर्मा का निर्देशन प्राप्त था। रास्तापाल के नानाभाई खांट ने प्रतिज्ञा की– ''जब तक मेरी जान रहेगी, तब तक मैं अपने गांव रास्तापाल की पाठशाला बन्द नहीं होने दूंगा।'' इस निर्णय की जानकारी जब जागीरदार ने रियासत को दी, तो पुलिस सुपरिन्टेण्डेण्ट और जिला मजिस्ट्रेट पाठशाला को जबरन बन्द कराने 18 जून, 1947 को दल–बल सहित ग्राम रास्तापाल पहुंच गए। नानाभाई खांट ने उत्तर दिया, 'प्रजामण्डल के आदेश से ही पाठशाला बन्द की जा सकती है।' मजिस्ट्रेट ने कहा, ' मैं महारावल का आदेश लेकर आया हूँ'। नानाभाई ने महारावल का आदेश मानने से इन्कार कर दिया। तब डंडो और बन्दूकों के कुन्दों से पाठशाला के आंगन में ही नानाभाई खांट की निर्मम पिटाई की गई। बन्दूकों के प्रहारों और आघातों से वे इतने घायल हो गए कि चिर निद्रा में सो गए।

'सरदार' हरलालसिंह, झुंझुनूं :

सरदार हरलालसिंह का जन्म झुंझुनूं जिले के हनुमानपुरा गांव में 1901 ई. में हुआ था। सरदार हरलालसिंह अशिक्षित थे। हरलालसिंह ने रियासती एवं जागीरदारी जुल्मों का डटकर विरोध किया। किसान एवं प्रजामण्डल आन्दोलन में इन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई। 'विद्यार्थी भवन झुंझुनूं' की स्थापना कर उसे राजनीतिक एवं सामाजिक गतिविधियों का केन्द्र बनाया। इसी केन्द्र से उन्होंने किसान आन्दोलन का संचालन किया। कुशल नेतृत्व के कारण उनके सहयोगियों ने उन्हें 'सरदार' उपाधि दी।

कप्तान दुर्गाप्रसाद, नीम का थाना :

कप्तान दुर्गाप्रसाद चौधरी का जन्म 1905 ई. में नीम का थाना में हुआ। इनकी प्रारंभिक शिक्षा अर्जुनलाल सेठी की 'वर्धमान पाठशाला' में तथा उसके उपरान्त सांभर तथा कानपुर में हुई। चौधरी ने 'राजस्थान सेवा संघ' के अन्तर्गत बिजौलिया में कार्य किया और 1930 ई. में स्वाधीनता आंदोलन में

कप्तान दुर्गाप्रसाद चौधरी

शामिल हो गए। 1930 ई. से 1947 ई. तक राष्ट्रीय आंदोलन में भाग लेने के कारण अनेक बार जेल गए। दुर्गा प्रसाद चौधरी ने एक पत्रकार के रूप में अपनी पहचान बनाई।

इन्होंने अजमेर और जयपुर से प्रकाशित 'दैनिक नवज्योति' का लंबे समय तक सम्पादन किया।

जानकी देवी बजाज, सीकर :

इनका जन्म लक्ष्मणगढ़ के सेठ गिरधारीलाल जाजोदिया के यहाँ 1893 ई.में मध्यप्रदेश के जावरा कस्बे में हुआ। 1902 में जमनालाल बजाज के साथ जानकी देवी का विवाह हुआ और इन्हें ससुराल वर्धा में रहना पड़ा। सर्वप्रथम जानकी देवी ने जड़ परम्पराओं को तिलांजलि दी, तभी खुलकर सत्याग्रह में भाग ले सकी। बजाज जी के देहान्त के बाद इनको गौसेवा संघ की अध्यक्ष बनाया गया। ये जयपुर प्रजामण्डल के 1944 ई के अधिवेशन की अध्यक्ष चुनी गईं।

अंजना देवी चौधरी, सीकर :

इनका जन्म 1897 ई. में सीकर जिले के श्रीमाधोपुर में एक मध्यम वर्गीय अग्रवाल परिवार में हुआ। इनका विवाह 1911 ई. में रामनारायण चौधरी से हुआ। अपने पति की इच्छानुसार 20 वर्ष की आयु में पर्दा प्रथा त्याग कर राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में सहयोग करने का संकल्प लिया। 1921–24 में मेवाड़, बूंदी राज्यों की स्त्रियों में राष्ट्रीयता, समाज सुधार की भावना को बढ़ावा दिया तथा उनके साथ सत्याग्रह का कार्य किया। चाहे दलितोत्थान का कार्य रहा हो अथवा अन्य रचनात्मक कार्य, इन्होंने अपने पति का भरपूर साथ दिया। ये समस्त रियासती जनता में गिरफ्तार होने वाली पहली महिला थीं।

रतन शास्त्री, जयपुर :

इनका जन्म 15 अक्टूबर, 1912 ई. में खाचरोद (म.प्र.) में रघुनाथजी व्यास के यहाँ पर हुआ। इनका विवाह हीरालाल शास्त्री से हुआ। सन् 1929 ई. के ग्राम सेवा ग्रामोत्थान एवं जनसेवा के उद्देश्य से वनस्थली में इन्होंने हीरालाल शास्त्री द्वारा लड़कियों की शिक्षा के लिए स्थापित जीवन कुटीर कार्यक्रम में पूरा सहयोग प्रदान किया। रतन शास्त्री ने सन् 1939 ई. में जयपुर राज्य प्रजामण्डल के सत्याग्रह आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया और सन् 1942 ई. के भारत छोड़ो आन्दोलन में भूमिगत कार्यकर्ताओं और उनके परिवारों की सेवा की।

रमा देवी, जयपुर :

इनका जन्म जयपुर में वैद्य गंगासहाय के घर में हुआ। इनका विवाह 7 वर्ष की उम्र में ही हो गया और 11 वर्ष की छोटी आयु में ये विधवा हो गई। बाद में गाँधी विचारधारा रखने वाले नेता लादूराम जोशी से पुनर्विवाह हुआ। विवाह के बाद इन्होंने खादी पहनना प्रारम्भ कर दिया तथा नौकरी छोड़ पति के साथ राजस्थान सेवा संघ का कार्य किया। बिजौलिया आंदोलन के समय पंडित लादूलाल जोशी की पत्नी रमा देवी 1931 ई. में बिजौलिया गई, जहाँ उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें वहाँ से निकल जाने को कहा, किन्तु उनका जवाब था, 'जब तक किसानों पर अत्याचार बन्द नहीं होंगे, वे यहाँ आती रहेंगी।' इन्हें वहाँ के कोतवाल ने अपमानित किया, पिटाई की, किन्तु वे दृढ़ रहीं। 1930 ई. व 1932 ई. में सत्याग्रह एवं सविनय अवज्ञा आन्दोलन में उन्होंने भाग लिया और जेल भी गईं।

कालीबाई, डूंगरपुर :

डूंगरपुर जिले के गांव रास्तापाल की निवासी भील, कन्या कालीबाई रास्तापाल की पाठशाला में पढ़ती थी। जून 1947 में डूंगरपुर महारावल के फरमान के बावजूद जब रास्तापाल की पाठशाला बन्द नहीं की गई, तो पुलिस सुपरिण्टेडेण्ट एवं मजिस्ट्रेट दल–बल सहित पाठशाला बन्द कराने पहुंचे। जब पुलिस ने पाठशाला बन्द कर इसकी चाबी उनके सुपुर्द करने का आदेश दिया तो प्रजामण्डल कार्यकर्ता नानाभाई खांट ने मना कर दिया। इस पर सिपाहियों ने नानाभाई खांट की पिटाई कर अध्यापक सेंगाभाई को ट्रक से बांधकर घसीटना शुरू कर दिया।

कालीबाई

तेरह वर्षीया भील कालीबाई, जो अपने खेत में घास काटकर लौट रही थी, जब उसने अपने गुरू सेंगाभाई को ट्रक के पीछे घिसटते देखा, तो वह भीड़ को चीरती हुई ट्रक के पीछे दौड़ पड़ी, और चिल्लाने लगी, 'मेरे गुरुजी को कहां ले जा रहे हो?' ट्रक को रुकते देखकर उसने सिपाहियों की चेतावनी की परवाह किए बिना दरांती से सेंगा भाई के कमर से बंधी रस्सी काट दी, मगर तभी पुलिस की गोलियों ने कालीबाई को छलनी कर दिया (18 जून, 1947)। अंत में अपने गुरु को बचाने के प्रयास में काली बाई ने 20 जून, 1947 ई. को दम तोड़ दिया। रास्तापाल में इसकी स्मृति में एक स्मारक बना हुआ है।

किशोरी देवी :

सरदार हरलाल सिंह की पत्नी किशोरी देवी ने अपने पति के साथ मिलकर शेखावटी क्षेत्र में जागीर प्रथा के विरोध में राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया। सिहोट के ठाकुर मानसिंह द्वारा सोतिया का बास नामक गाँव में किसान महिलाओं के साथ किये गये दुव्यर्वहार के विरोध में सीकर जिले के कटराथल नामक स्थान पर किशोरी देवी की अध्यक्षता में एक विशाल महिला सम्मेलन 1934 ई. में आयोजित किया गया जिसमें क्षेत्र की लगभग 10,000 महिलाओं ने भाग लिया।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. सीकर क्षेत्र के उन तीन क्रांतिकारियों के नामों का उल्लेख कीजिए , जिन्होंने 1857 ई. के स्वतंत्रता संग्राम में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2. 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में ब्रिटिश शासन ने सर्वप्रथम राजस्थान के किस क्रांतिकारी को फांसी पर लटकाया?

3. विजयसिंह पथिक ने मुख्यतः किन समाचार पत्रों का संपादन किया?

4. 'चेतावनी रा चूंगटिया' किसकी रचना है?

5. डूंगरपुर जिले के रास्तापाल ग्राम में किस क्रांतिकारी की स्मृति में स्मारक बना हुआ है?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. स्वतंत्रता संग्राम में विजयसिंह पथिक की भूमिका का वर्णन कीजिए।

2. अर्जुनलाल सेठी कौन थे? भारत के मुक्ति संग्राम में उनकी क्या भूमिका रही?

3. भारत के स्वतंत्रता संग्राम के अंतर्गत राजस्थान में समाचार पत्रों की क्या भूमिका रही?

निबंधात्मक प्रश्न :

1. भारत की आजादी के आंदोलन के दौरान राजस्थान में महिला क्रांतिकारियों की भूमिका को रेखांकित कीजिए।

2. स्वतंत्रता संग्राम में शाहपुरा के बारहठ परिवार के योगदान को सविस्तार समझाइए।

अध्याय

3

राजस्थान के प्रमुख किसान आंदोलन

राजस्थान में ब्रिटिश सरकार के आधिपत्य की स्थापना के पश्चात् यहाँ आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन आया। शासक अंग्रेजी संरक्षण के कारण स्वयं को सुरक्षित मानने लगे तथा अपनी किसान जनता के प्रति निरंकुश होने लगे। साथ ही अंग्रेजों की नीतियों के कारण कुटीर उद्योग धंधे बर्बाद होने लगे तथा भूमि पर आश्रित जनसंख्या का प्रतिशत बढ़ने लगा। इस प्रकार अब किसानों में असंतोष बढ़ता गया, जिसका परिणाम विभिन्न किसान आंदोलनों के रूप में सामने आया।

बिजौलिया आन्दोलन :

बिजौलिया जो वर्तमान में भीलवाड़ा जिले में स्थित है, मेवाड़ राज्य में प्रथम श्रेणी का ठिकाना था। इस जागीर की भौगोलिक बनावट इस प्रकार थी कि यहाँ के किसान आन्दोलन के समय बड़ी सुगमता से पड़ोसी सीमावर्ती राज्यों में पलायन कर सकते थे। यहाँ के अधिकांश लोगों का जीवन निर्वाह कृषि पर आधारित था। कृषकों में अधिकांश धाकड़ जाति के लोग थे। वे अपने परिश्रम और दक्षता के लिए प्रसिद्ध थे। जाति के रूप में वे संगठित थे तथा पंचायत व्यवस्था में उनकी दृढ़ निष्ठा थी। 1894 ई. में राव गोविन्ददास की मृत्यु के बाद बिजौलिया ठिकाने के जागीरदारों व किसानों के संबंधों में विभिन्न कारणों से कटुता आई, जिसका परिणाम था – बिजौलिया किसान आन्दोलन।

बिजौलिया किसान आन्दोलन का अध्ययन तीन भागों में किया जा सकता है – प्रथम चरण 1897 ई. से 1915 ई. तक का था। इस काल में आन्दोलन का नेतृत्व स्थानीय लोगों द्वारा किया गया। आन्दोलन

का द्वितीय चरण 1915 ई. से आरम्भ हुआ, जो 1923 ई. तक चला। आन्दोलन का यह काल अत्यन्त महत्वपूर्ण था। इस काल में आन्दोलन का संचालन राष्ट्रीय स्तर के योग्य व अनुभवी व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न हुआ। अब यह आन्दोलन राष्ट्रीय मुख्यधारा से जुड़ गया था। तीसरा चरण आन्दोलन का पराभव काल था, जो 1941 ई. में समाप्त हुआ।

1897 ई. में बिजौलिया ठिकाने के हजारों किसान एक मृत्यु–भोज के अवसर पर गिरधरपुरा गांव में एकत्रित हुए। यहाँ ठिकाने के अत्याचार व शोषण से संतप्त किसानों ने एक दूसरे से विचार–विमर्श किया और निर्णय लिया कि उनके प्रतिनिधि उदयपुर जाकर महाराणा फतहसिंह से भेंट कर न्याय के लिए पुकार करें किंतु इस पुकार का कोई परिणाम नहीं निकला।

रियासती सरकार द्वारा अपनाई गई निष्क्रियता व उदासीनता से बिजौलिया के शासक को किसान विरोधी नीति अपनाने के लिए प्रोत्साहन मिला। बिजौलिया जागीर का किसान पहले से ही विभिन्न प्रकार की लागों की बोझ से दबा हुआ था। अब 1903 ई. में राव कृष्णसिंह ने बिजौलिया अंचल में एक नया कर चँवरी नाम से लगा दिया। हर व्यक्ति को अपनी लड़की के विवाह के अवसर पर 13 रुपये (कुछ साक्ष्यों में पाँच रुपये लेना लिखा है) ठिकाने में जमा करवाना पड़ता था। फिर वर के लिए राव साहब के समक्ष उपस्थित होकर नतमस्तक हो आशीर्वाद प्राप्त करना आवश्यक था। इस अपमानजनक कर के लागू करने पर किसानों में रोष व्याप्त होना स्वाभाविक था। किसानों ने इसका मूक विरोध किया। उन्होंने 2 वर्षों तक अपनी कन्याओं का विवाह ही नहीं किया। इसके बाद राव ने कुछ नाममात्र रियायतें दी, किन्तु संतुष्ट हाने के बजाय किसानों को अपनी शक्ति का अहसास अवश्य हुआ।

1906 ई. में राव कृष्णसिंह का निःसन्तान देहांत हो गया। उसके स्थान पर उसका निकट का सम्बंधी पृथ्वीसिंह बिजौलिया का स्वामी बना। उसने मेवाड़ राज्य द्वारा नये जागीरदार से तलवार बँधाई के रूप में ली गई रकम का भार जनता पर डाल दिया। किसानों ने जब इसका विरोध किया, तो स्थानीय शासक ने किसान आन्दोलन से जुड़े व्यक्तियों के विरुद्ध सख्ती का रुख अपनाया और दमनकारी नीति का अनुसरण किया। किसान नेता साधु सीतारामदास को ठिकाने के पुस्तकालय से सेवामुक्त कर दिया गया। अन्य किसान नेताओं को जेल में डाल दिया।

1914 ई. में राव पृथ्वीसिंह का देहांत हो गया और उसका पुत्र केसरी सिंह अल्पवयस्क था, इसलिए जागीरी प्रशासन कोर्ट ऑफ वार्ड्स (महाराणा) के नियंत्रण में चला गया। किंतु किसानों को फिर भी कोई खास फायदा न हुआ, उनके हालात जस के तस थे। इन हालात में इस प्रकार इस आंदोलन का प्रथम चरण पूरा होता है।

इस आंदोलन का दूसरा चरण प्रारम्भ होता है, जब 1916 में विजय सिंह पथिक (वास्तविक नाम भूपसिंह) इस आंदोलन से जुड़ते है। विजयसिंह पथिक में कार्य करने की अपूर्व क्षमता थी। सर्वप्रथम उन्होंने किसानों को सुनियोजित रूप से संगठित किया तथा आन्दोलन को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया। उन्होंने बिजौलिया में विद्या प्रचारिणी सभा का गठन किया, जिसके तत्वावधान में एक पुस्तकालय, एक पाठशाला और एक अखाड़ा चालू किया। ये राजनीतिक गतिविधियों के केन्द्र बन गए। माणिक्यलाल वर्मा, जो इस समय बिजौलिया ठिकाने में एक कर्मचारी के पद पर कार्यरत थे, पथिक के सम्पर्क में आए, उन्होंने पथिक से प्रभावित होकर ठिकाने की नौकरी से अवकाश ले लिया। उन्होंने पथिक से आजीवन देश सेवा

की दीक्षा ली और पथिक के साथ किसानों को संगठित करने के कार्य में जुट गए। इस कार्य में साधु सीतारामदास का भी पथिक को बड़ा सहयोग रहा। विजयसिंह पथिक ऊपरमाल क्षेत्र में अत्यधिक लोकप्रिय हो गए थे। वहाँ के निवासी उन्हें महात्माजी कहकर सम्बोधित करते थे। उनके आदेशों का पालन करने के लिए वे सदैव तैयार रहते थे। पथिक किसानों की दुर्दशा से परिचित हो चुके थे। इस भयावह स्थिति के निवारण हेतु पथिक ने किसान आन्दोलन को सक्रिय बनाने का निर्णय लिया और 1917 ई. में हरियाली अमावस्या के दिन ऊपरमाल पंच बोर्ड के तत्वावधान में क्रान्ति का बिगुल बजाया।

पथिक ने किसानों को युद्ध का चंदा नहीं देने के लिए आह्वान किया। किसानों ने घोषणा की कि वे बेगार नहीं करेंगे। गोविन्द निवास गाँव के नारायणजी पटेल ने ठिकाने में बेगार करने से इन्कार कर दिया। इस पर ठिकाने के कर्मचारियों ने उसे पकड़ लिया और कैद में डाल दिया। इसकी सूचना मिलने पर किसान–पंचायत के आदेशानुसार किसानों के जत्थे बिजौलिया पहुँचने लगे। ठिकाने के प्रशासक भयभीत हो गए। उन्होंने नारायणजी पटेल को जेल से मुक्त कर दिया। किसानों की यह प्रथम विजय थी।

पथिक ने बिजौलिया किसान आन्दोलन को राष्ट्रीय स्तर पर लाने व सहयोग दिलवाने के उद्देश्य से 'प्रताप' समाचार–पत्र के सम्पादक गणेश शंकर विद्यार्थी से सम्पर्क स्थापित किया। उन्होंने अपने पत्र 'प्रताप' में बिजौलिया आन्दोलन सम्बन्धी समाचार देने के लिए एक स्थायी स्तम्भ ही खोल दिया। इस प्रचार के फलस्वरूप देशवासियों का बिजौलिया किसान आन्दोलन की ओर ध्यान आकर्षित हुआ।

महात्मा गाँधी ने बिजौलिया किसान आन्दोलन सम्बन्धी जानकारी प्राप्त करने के उद्देश्य से पथिक को बम्बई आमंत्रित किया था। पथिक ने बिजौलिया के किसानों पर किए जा रहे अत्याचारों का विवरण गाँधीजी के समक्ष प्रस्तुत किया, जिससे गाँधीजी प्रभावित हुए। गाँधीजी ने अपने निजी सचिव महादेव भाई को ऊपरमाल के किसानों की स्थिति की जाँच करने बिजौलिया भेजा। गाँधीजी ने इस आशय का एक पत्र महाराणा को भी लिखा था। गाँधीजी ने बिजौलिया किसान आन्दोलन के प्रति नैतिक समर्थन दिया।

प्रारम्भ में ब्रिटिश सरकार बिजौलिया के आन्दोलनकारी किसानों को रियायतें देने के पक्ष में नहीं थी। शनैः शनैः स्थिति में परिवर्तन आने लगा। अगस्त, 1920 ई. में भारत में महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ, जो 1921 ई. में भयंकर रूप ले चुका था।

ऐसी स्थिति में ब्रिटिश सरकार ने निश्चय किया कि बिजौलिया किसान आन्दोलन को तुरन्त शान्त किया जाए। इस उद्देश्य से ब्रिटिश सरकार ने एक उच्चस्तरीय समिति का गठन किया, जिसमें ए.जी.जी. रॉबर्ट हॉलैंड, उसके सचिव आगल्वी, मेवाड़ के ब्रिटिश रेजीडेन्ट विल्किसन, मेवाड़ राज्य के दीवान प्रभाषचन्द्र चटर्जी और राज्य के सायर हाकिम बिहारीलाल को रखा। लम्बे विचार–विमर्श के पश्चात् 11 फरवरी, 1922 ई. को ठिकाने और किसान–पंचायत के बीच समझौता सम्पन्न हुआ।

ए.जी.जी. हॉलैंड ने किसानों के पक्ष के औचित्य को स्वीकारा था। समझौते के अनुसार किसानों को अनेक रियायतें दी गई थी। लगभग 35 लागें समाप्त कर दी गईं। इस प्रकार, 1922 ई. में आन्दोलन समाप्त हुआ।

असहयोग आन्दोलन के समाप्त होते ही ए.जी.जी. किसानों के साथ हुए समझौते के प्रति उदासीन हो गया और बिजौलिया के जागीरदार ने समझौते का उल्लंघन करते हुए किसानों पर पुनः नई लागें लगा दी और लगान की माँग भी बढ़ा दी। 1923–26 का समय किसानों ने बड़ी तकलीफ में गुजारा। मार्च, 1927 ई. में किसान पंचायत हुई, जिसमें रामनारायण चौधरी और माणिक्यलाल वर्मा भी उपस्थित हुए। पथिक ने किसानों को बारानी भूमि छोड़ने तथा अहिंसात्मक साधनों से आन्दोलन को जारी रखने का सुझाव दिया, किंतु यह प्रयोग असफल रहा।

20 जुलाई, 1931 ई. को सेठ जमनालाल बजाज ने उदयपुर में महाराणा तथा सर सुखदेव प्रसाद से व्यापक विचार– विमर्श किया, जिसके फलस्वरूप समझौता हो गया। हालांकि उदयपुर ने इसका पालन न किया, किंतु जब मेवाड़ प्रजामंडल आंदोलन का व्यापक प्रसार हो रहा था, तो इस भय से कि किसान प्रजामंडल से न जुड़ जाएँ, कुछ पहल आवश्यक थी। 1941 ई. में मेवाड़ के दीवान टी. विजय राघवाचार्य ने राजस्व मन्त्री डॉ. मोहनसिंह मेहता को बिजौलिया भेजा, जिन्होंने किसान नेताओं व अन्य नेताओं से बातचीत कर किसानों की समस्या का समाधान करवाया। किसानों को उनकी जमीनें वापस दे दी गई। इस प्रकार यह आन्दोलन समाप्त हुआ।

बेगूं किसान आंदोलन, मेवाड़ (1921 ई.) :

बिजौलिया आंदोलन से प्रेरणा पाकर बेगूं (मेवाड़) के किसानों ने भी अनावाश्यक व अत्यधिक करों, लाग–बाग, बैठ–बेगार व सामन्ती जुल्मों के विरुद्ध रामनारायण चौधरी– के नेतृत्व में 1921 ई. में आंदोलन शुरू किया। बेगूं के किसान 1921 ई. में मैनाल के भैरूकुण्ड नामक स्थान पर एकत्रित हुए। सामन्ती दमन चक्र चलता रहा, 1923 ई. में किसानों के प्रमुख रूपाजी व कृपाजी धाकड़ सेना की गोलाबारी से शहीद भी हुए, लेकिन किसान अपनी मांगों के लिए जूझते रहे। यद्यपि बेगूं के ठिकानेदार ने कृषकों से समझौता करने का प्रयास भी किया, लेकिन उसे अमान्य कर बेंगू आंदोलन को बुरी तरह से कुचला गया। किंतु मेवाड़ सरकार आंदोलन को दबा नहीं सकी। बेगूं के ठाकुर अनूपसिंह एंव राजस्थान सेवा संघ के मध्य जो समझौता हुआ, जिसे 'बोल्शेविक समझौते' की संज्ञा दी गई।

भरतपुर किसान आंदोलन :

भरतपुर राज्य में किसानों की दशा अच्छी थी। यहाँ 95 प्रतिशत भूमि सीधे राज्य के नियंत्रण में थी। यहाँ 5 जातियां ब्राह्मण, जाट, गुर्जर, अहीर एवं मेव कमोबेश समान हैसियत रखती थीं। भरतपुर राज्य में 1931 में नया भूमि बन्दोबस्त लागू किया गया जिससे भू–राजस्व में वृद्धि हो गई। भू–राजस्व अधिकारी लम्बरदारों ने इस बढ़े हुए भू–राजस्व के विरोध में आंदोलन शुरू किया।

जब राज्य ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया तो 23 नवम्बर, 1931 को 'भोजी लम्बरदार' के नेतृत्व में 500 किसान भरतपुर में एकत्रित हुए। भोजी लम्बरदार ने राज्य के विरुद्ध भड़काऊ भाषण दिए। नवम्बर, 1931 में 'भोजी लम्बरदार' को गिरफ्तार कर लिया गया जिससे यह आंदोलन समाप्त हो गया।

मेव किसान आंदोलन :

अलवर, भरतपुर क्षेत्र में मोहम्मद हादी ने 1932 ई. में 'अन्जुमन खादिम उल इस्लाम' नामक संस्था स्थापित कर मेव किसान आंदोलन को एक संगठित रूप दिया। अलवर के मेव किसान आंदोलन का नेतृत्व

गुडगांव के 'चौधरी यासीन खान' द्वारा किया गया। इसके नेतृत्व में किसानों ने खरीफ फसल का लगान देना बंद कर दिया। राज्य सरकार ने मेवों को संतुष्ट करने के लिए राज्य कॉन्सिल में एक मुस्लिम सदस्य खान बहादुर काजी अजीजुद्दीन बिलग्रामी को सम्मिलित कर लिया। इसके बावजूद आंदोलन न केवल तेज हुआ, बल्कि उग्र भी हो गया। 1937 में मि. बिलग्रामी के मातहत मेव संकट की जांच हेतु एक विशेष समिति का गठन किया गया। इस समिति की रिपोर्ट के आधार पर मेवों को भू–राजस्व तथा अन्य करों में छूट के साथ–साथ सामाजिक व धार्मिक समस्याओं का समाधान भी किया गया।

अलवर किसान आंदोलन एवं नीमूचाणा हत्याकाण्ड (1921–1925) :

अलवर रियासत में जंगली सुअरों को अनाज खिला कर रोधों में पाला जाता था। ये सुअर किसानों की खड़ी फसल बर्बाद कर देते थे। उनकों मारने पर भी रियासती सरकार ने पाबंदी लगा रखी थी। सुअरों की समस्या के निराकरण हेतु किसानों ने 1921 में आंदोलन शुरू किया। अंततः सरकार ने समझौता कर किसानों, को सुअर मारने की इजाजत दे दी। 1923–24 में अलवर महाराजा जयसिंह ने लगान की दरों को बढ़ा दिया। विरोधस्वरूप 14 मई, 1925 को लगभग 800 किसान अलवर के नीमूचाणा गांव में एकत्र हुए। उस सभा पर सैनिक बलों ने मशीनगनों से अंधाधुंध फायरिंग की, जिससे सैकड़ों लोग मारे गए। महात्मा गांधी ने इस कांड को 'जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड से भी वीभत्स' बताया और उसे डायरवाद गहरा एवं व्यापक की संज्ञा दी। अंततः सरकार को लगान के बारे में किसानों के समक्ष झुकना पड़ा, और आंदोलन समाप्त हुआ।

बूंदी राज्य में किसान आन्दोलन :

बिजौलिया और बेगूं के किसानों के समान बूंदी राज्य के किसानों को भी अनेक प्रकार की लागें (लगभग 25), बेगार और ऊँची दरों पर लगान की रकम देनी पड़ रही थी। बिजौलिया और बेगूं के किसानों के आन्दोलन से वे अत्यधिक प्रभावित हुए थे। परिणामतः अप्रैल, 1922 ई. में बिजौलिया की सीमा से जुड़े बून्दी राज्य के बरड़ क्षेत्र के किसानों ने बून्दी प्रशासन के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ कर दिया। इस आन्दोलन का नेतृत्व राजस्थान सेवा संघ के कर्मठ कार्यकर्ता नैनूराम के हाथों में था।

बूंदी राज्य ने इन किसानों पर अत्याचार प्रारम्भ कर दिए। राजस्थान सेवा संघ के माध्यम से बून्दी राज्य में चल रहे दमनचक्र की सर्वत्र निन्दा की गई। 2 अप्रैल, 1923 ई. को डाबी गांव में किसानों की एक सभा हुई। सभा में एकत्रित किसानों की भीड़ पर पुलिस ने निष्ठुरता से लाठी प्रहार किया तथा गोलियां चलाई, जिसके परिणामस्वरूप नानक भील और देवलाल गुर्जर शहीद हुए। बून्दी राज्य की इस घटना की सर्वत्र निन्दा की गई। बून्दी सरकार ने किसानों की कुछ शिकायतों का निवारण किया और लाग–बाग और बेगार में कुछ रियायतें दी। किसान आन्दोलनकारी राज्य की ओर से दी गई रियायतों से पूर्णतया सन्तुष्ट तो नहीं थे, परन्तु वे अपने आन्दोलन को आगे चलाने की स्थिति में भी नहीं थे, क्योंकि अब उन्हें राजस्थान सेवा संघ से मार्गदर्शन मिलना बन्द हो गया था। 1923 ई. के अन्त तक आन्दोलन प्रायः समाप्त हो गया। 1936 ई. में एक बार फिर बरड़ क्षेत्र में आन्दोलन का दौर चालू हुआ।

5 अक्टूबर, 1936 ई. की हिन्डोली में स्थित हूडेश्वर महादेव के मन्दिर में 90 गाँवों के गुर्जर–मीणा किसानों के 500 प्रतिनिधियों का एक विराट सम्मेलन हुआ, जहाँ उन्होंने एक माँग–पत्र तैयार किया और

उसे सरकार को प्रेषित किया। सरकार ने उनकी मांगों पर ध्यान नहीं दिया। किसानों ने राज्य के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया, जो लम्बे समय तक चला। अन्ततः सरकार ने चराई करों में कुछ छूट दी और युद्ध ऋण की वसूली में शक्ति का प्रयोग बन्द कर दिया। आन्दोलन के समय जिन लोगों को गिरफ्तार किया गया उन्हें छोड़ दिया गया। इस प्रकार यह आन्दोलन समाप्त हो गया।

जयपुर राज्य में किसान आन्दोलन :

राजस्थान के अन्य राज्यों के किसानों की भाँति जयपुर राज्य के किसानों की स्थिति भी बड़ी दयनीय थी। वे अपने शासकों के आतंक, अत्याचार और शोषण से उत्पीड़ित थे। जयपुर रियासत में किसान आन्दोलन का मूल केन्द्र राज्य के पश्चिमी भाग में स्थित शेखावटी, तोरावटी, साँभर, सीकर और खेतड़ी के ठिकाने थे। किसान आन्दोलन का श्रीगणेश सीकर ठिकाने में हुआ।

1922 ई. में सीकर के नये रावराजा कल्याणसिंह ने भूमिकर में 25 से 50 प्रतिशत की वृद्धि कर दी। उसने किसानों को आश्वासन दिया था कि अगले वर्ष उनसे ली जा रही लागों में छूट दे दी जाएगी। रावराजा ने अपने वचन का पालन नहीं किया। इससे किसान खिन्न हो गए व आंदोलन प्रारम्भ कर दिया।

रामनारायण चौधरी और हरि ब्रह्मचारी के सीकर आने से किसान आन्दोलन को प्रोत्साहन मिला। सीकर आन्दोलन की गूंज केन्द्रीय असेम्बली एवं ब्रिटेन के हाउस ऑफ कॉमंस में उठी। ब्रिटिश सरकार ने रावराजा को सलाह दी कि वह अपने ठिकाने में नियमित रूप से भूमि बन्दोबस्त की व्यवस्था करे। रावराजा ने ठिकाने में भूमि बन्दोबस्त करवाने के पूर्व भूमि का सर्वेक्षण करवाया, जिसमें छोटी जरीब का उपयोग किया गया था। सीकर के रावराजा ने 'इजाफा' के नाम पर बीघा भूमि पर दो आना भूमिकर में वृद्धि कर दी।

जरीब की लम्बाई के मामले को लेकर तथा भूमिकर में की गई वृद्धि के कारण किसानों में पुनः असन्तोष बढ़ने लगा। अक्टूबर, 1925 ई. में जाट सभा का बगड़ (शेखावटी) में एक अधिवेशन आयोजित हुआ, जिसमें राज्य और जागीरदारों द्वारा जाटों पर किए जा रहे सामाजिक और आर्थिक शोषण के विरुद्ध अभियान चलाने सम्बन्धी कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने का निर्णय लिया गया। जाट नेताओं ने शेखावाटी के गाँवों में पहुँचकर कृषकों से सम्बन्ध स्थापित कर उन्हें ठिकानेदारों को भूमि लगान न देने के लिए समझाया। भतरपुर के जाट नेता देशराज ने सीकर और शेखावटी के जाट किसानों को अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने को प्रेरित किया और उनमें एक नयी चेतना उत्पन्न की।

1932 ई. में वसन्त पंचमी के पर्व के अवसर पर झुंझुनूं में जाट महासभा के तत्वावधान में भव्य समारोह हुआ। इस समारोह में 60 हजार जाट किसानों ने भाग लिया था। इससे किसान आन्दोलन को प्रोत्साहन मिला। जाटों को संगठित करने के उद्देश्य से देशराज ने सितम्बर, 1933 ई. में पलथाना में एक सभा का आयोजन किया, जिसमें सीकर में एक महायज्ञ करने का निर्णय लिया गया।

रावराजा ने महायज्ञ के अध्यक्ष की सवारी के लिए हाथी देने से इन्कार कर दिया। किसानों और

शासकों के बीच तनाव उत्पन्न हो गया था। महायज्ञ के समय (जनवरी, 1934) किसानों द्वारा दिये गये भाषणों में ठिकाने की नीति की कटु आलोचना की गई थी। इससे खिन्न होकर ठिकाने के रावराजा ने जाट सभा के सचिव चन्द्रभान को गिरफ्तार कर उसे छः सप्ताह की जेल तथा 51 रुपये जुर्माने का दण्ड दिया। जाटों ने इसका कड़ा विरोध किया। सिहोट के ठाकुर मानसिंह द्वारा सोतिया का बास नामक गांव में किसान महिलाओं के साथ किए गए दुर्व्यवहार के विरोध में 25 अप्रैल, 1934 ई. को जाट महिलाओं ने एक सम्मेलन आयोजित किया, जिसमें दस हजार स्त्रियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता किशोरी देवी ने की थी।

अप्रैल, 1935 ई. में सीकर ठिकाने का राजस्व अधिकारी पुलिस की सहायता से कूदन ग्राम में भूमि लगान वसूल करने पहुँचा। उस समय जाट किसानों में हिंसा भड़क उठी। पुलिस ने गोली चला दी, जिससे चार जाट मारे गए और 14 किसान घायल हुए। शहीद होने वाले किसान थे –चेतराम, टीकूराम तथा लगभग 175 जाट किसान गिरफ्तार कर लिए गए। इस हत्याकांड की गूँज ब्रिटिश संसद में भी सुनाई दी। इससे मजबूर होकर जयपुर के महाराजा को इस ओर ध्यान देना पड़ा।

आतंककारी साधन अपनाने के बावजूद जाट आन्दोलन को कुचला नहीं जा सका। अन्ततः सीकर ठिकाने को नियमित भूमि सर्वेक्षण तथा बन्दोबस्त का कार्य आरम्भ करना पड़ा तथा किसानों की कतिपय माँगों को स्वीकार करना पड़ा। इस आंदोलन के लिए किसानों को संगठित होने के लिए प्रेरणा देने वाली महिला धापी दादी थी। वहीं इस आंदोलन का नेतृत्व करने वाले प्रमुख किसान नेता थे – सरदार हरलाल सिंह, नेतराम सिंह, पृथ्वीसिंह गोठड़ा, पन्ने सिंह बाटड़ानाउ, हरूसिंह पलथाना, गौरूसिंह कटराथल, ईश्वरसिंह भैरूपुरा, लेखराम कसवाली आदि।

इस बीच शेखावटी के अन्य ठिकानों में भी जाट आन्दोलन फैल गया। मार्च, 1933 ई. में खेतड़ी, डूंडलोद, नवलगढ़, मण्डावा, बिसाऊ, सूरजगढ़, हमीरवास, इस्माइलपुर, जखारा, मलसीसर, अलसीसर, पाटन आदि ठिकानों में भी जाटों ने भूमि कर देने से मना कर दिया। 16 मई, 1934 ई. को हमीरवास के ठाकुर कल्याणसिंह के आदमियों ने हनुमानपुरा ग्राम के जाट किसानों के घरों में आग लगा दी, जिससे 33 घर जलकर राख हो गए। इसी प्रकार डूंडलोद के ठाकुर ने जयसिंहपुरा गाँव के किसानों को आतंकित किया तथा उसके भाई हरनाथसिंह ने सशस्त्र व्यक्तियों के साथ किसानों पर लाठियों व तलवारों से वार कर जाट किसानों को घायल कर दिया। जागीरदारों की इन हरकतों से शेखावाटी के किसानों ने सशस्त्र संगठित होकर उनका डटकर मुकाबला किया। शेखावटी जाट किसान पंचायत की तरफ से 9 अक्टूबर, 1934 को जयपुर महाराजा को माँग–पत्र प्रेषित किया गया और प्रार्थना की कि जागीरदारों के आतंक से उन्हें मुक्त कराएँ। शेखावटी के नाजिम ने भी अपनी रिपोर्ट राज्य सरकार को प्रेषित की। नाजिम ने किसानों की शिकायतों की पुष्टि की और उनके समाधान के लिए सुझाव दिया। परिणामतः 1936 ई. में ठिकाने में भूमि सर्वेक्षण और भूमि बन्दोबस्त की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई, जिससे शेखावटी व सीकर क्षेत्र में कुछ शान्ति हुई।

सीकर व शेखावटी के दीर्घकालीन किसान संघर्ष का अन्त मार्च, 1947 ई. में जयुपर में हीरालाल शास्त्री के नेतृत्व में लोकप्रिय सरकार के गठन हो जाने के साथ ही हुआ। राजस्व मंत्री टीकाराम पालीवाल ने गैर–खालसा क्षेत्र में भूमि बन्दोबस्त करवाने की व्यवस्था की।

मारवाड़ किसान आंदोलन :

जयपुर राज्य के शेखावटी के जाट आन्दोलन का प्रभाव मारवाड़ राज्य के डीडवाना और साँभर परगनों तथा शेखावटी से लगे क्षेत्र के जाटों पर भी पड़ा। मई, 1938 ई. में मारवाड़ लोक परिषद की स्थापना हुई। मारवाड़ लोक परिषद ने किसानों की माँगों का जोरदार समर्थन किया तथा सरकार की कटु आलोचना की। जागीरदारों ने किसान आन्दोलन के लिए लोक परिषद के नेताओं को उत्तरदायी ठहराया, इसलिए उन्होंने परिषद के कार्यकर्त्ताओं के प्रति कड़ाई व पाशविक दृष्टिकोण अपनाया।

28 मार्च, 1942 ई. को लोक परिषद के कार्यकर्ताओं ने चंद्रावल गांव में उत्तरदायी शासन दिवस मनाने का निर्णय लिया। चन्द्रावल के ठाकुर ने मारवाड़ लोक परिषद के कार्यकर्ताओं को ऐसा करने के लिए रोकने हेतु अपने आदमी भेजे, जिन्होंने परिषद के कार्यकर्ताओं पर लाठी व तेज धार वाले हथियारों से प्रहार किया, जिससे 25 व्यक्तियों को गहरी चोटें आई। सोजत के मीठालाल और विजयशंकर, कंटालिया के मार्कन्डेश्वर और हरिराम, चंद्रावल के रामसुख और चाँदमल भयंकर रूप से घायल हुए।

13 मार्च, 1947 को डाबड़ा (डीडवाना परगना) गाँव की किसान सभा और लोक परिषद की ओर से एक किसान सम्मेलन बुलाया गया था। लोक परिषद के नेता मथुरादास माथुर, द्वारकादास पुरोहित, राधाकिशन बोहरा, किशनलाल शाह, नरसिंह कच्छवाह, बंशीधर पुरोहित, हरीन्द्र कुमार चौधरी, सी.आर. चौपासनीवाला आदि भाग लेने डाबड़ा पहुँचे, और वे स्थानीय नेता मोतीलाल चौधरी के निवास स्थान पर ठहरे। जागीरदारों ने पहले से ही किसान सम्मेलन को न होने देने के लिए तैयारी कर ली थी। जैसे ही लोक परिषद के कार्यकर्ता व नेता वहाँ पहुँचे, उन्होंने मोतीलाल के घर पर लाठियाँ व तेज धारवाले हथियारों से धावा बोल दिया और नेताओं की नृशंसतापूर्ण पिटाई की। मोतीलाल की माता के पैर काट दिए गए। उनके पिता और भाई को मार दिया गया। उनकी पत्नी के मुख को विरूप कर दिया गया। गाँव में चारों तरफ आतंक का वातावरण बन गया। डाबड़ा काण्ड की सर्वत्र निन्दा की गई।

बीकानेर किसान आंदोलन :

बीकानेर राज्य में कुल 2917 गाँव थे, जिनमें से 1393 गाँव जागीरी क्षेत्र में स्थित थे। सीमा से जुड़े सीकर क्षेत्र और शेखावटी के जाट आन्दोलनों का बीकानेर राज्य के जाट किसानों पर व्यापक रूप से प्रभाव पड़ा था। बीकानेर के अनेक जाट प्रतिनिधियों ने झुंझुनूं में आयोजित अखिल भारतीय जाट महासभा के अधिवेशन में तथा सीकर में 20 से 29 जनवरी, 1934 ई. के विशाल जाट प्रजापति महायज्ञ में सक्रिय रूप से भाग लिया था। इन घटनाओं के फलस्वरूप बीकानेर राज्य के जाटों में भी जागीरदारों के विरुद्ध आवाज उठाने का साहस उत्पन्न हुआ तथा उनमें राजनीतिक चेतना आई।

उस समय बीकानेर राज्य के जागीरी क्षेत्र में 37 लागें विद्यमान थी। किसानों से जागीरदार बेगार लेता था। 1937 ई. में उदरासर के किसानों ने लाग–बाग के विरुद्ध आवाज उठाई। उनके नेता जीवन चौधरी के आग्रह पर बीकानेर प्रजामंडल ने किसानों की शिकायतें राज्य सरकार के समक्ष रखीं, किंतु इसका कोई परिणाम नहीं निकला।

बीकानेर राज्य में किसान आन्दोलनों की श्रृंखला में दूधवाखारा गाँव (चूरू के पास) के आन्दोलन का भी एक विशिष्ट स्थान है। पुलिस ने यहाँ खुलकर अत्याचार किया था। किसान नेता हनुमानसिंह ने ठाकुर

द्वारा किए जा रहे अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाई। वह पहले भादरा में महाराजा शार्दूलसिंह से मिला और बाद में अनेक साथियों के साथ वह महाराजा से मिलने माउण्ट आबू पहुँचा। महाराजा ने कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया। जब वह आबू से लौट रहा था, तब रतनगढ़ में उसे पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया (जून, 1945 ई.)।

हनुमानसिंह पर देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया और उसे पाँच वर्ष का कारावास दिया गया। उसने जेल में भूख हड़ताल की। स्वास्थ्य खराब हो जाने पर 10 अगस्त, 1945 ई. को हनुमानसिंह को जेल से मुक्त कर दिया गया। महाराजा ने उसे शान्त करने के लिए 100 मुरबा जमीन गंगानगर क्षेत्र में देने का प्रलोभन दिया था, परन्तु उसने इसे स्वीकार नहीं किया। जेल से मुक्त होकर भी वे लगातार संघर्ष करते रहे, और दो बार और जेल की यात्रा की। अन्ततोगत्वा बीकानेर राज्य में लोकप्रिय सरकार की स्थापना हुई, तब उन्हें जेल से मुक्त किया गया (4 जनवरी, 1948 ई.)। यद्यपि दूधवाखारा किसान आन्दोलन सफल नहीं रहा, तथापि इससे राजनीतिक चेतना का संचार हुआ। किसानों में आत्मविश्वास जाग्रत हुआ। वे अब अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाने लगे थे।

30 जून से 1 जुलाई, 1946 ई. को प्रजा परिषद ने रायसिंहनगर में एक राजनीतिक सभा का आयोजन किया। इस सभा पर पुलिस ने लाठियों से आक्रमण किया, जिससे अनेक कार्यकर्ता घायल हुए। उग्र भीड़ ने राजकीय विश्राम–गृह को घेर लिया। भीड़ को हटाने के लिए पुलिस ने गोलियां चलाई जिसके परिणामस्वरूप बीरबलसिंह मारा गया। अखिल भारतीय देशी रियासत परिषद की ओर से हीरालाल शास्त्री, गोकुलभाई भट्ट और बीकानेर के रघुवरदयाल गोयल ने रायसिंहनगर कांड की समीक्षा की। हनुमानगढ़ में नियुक्त मुंसिफ मजिस्ट्रेट हरदत्तसिंह चौधरी ने राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित होकर सरकारी नौकरी से त्याग–पत्र दे दिया। उसने प्रजा परिषद की सदस्यता स्वीकार कर ली। 3 सितम्बर, 1946 ई. के गोगामेड़ी गाँव में एक विशाल किसान सभा का आयोजन किया गया था, जहाँ जागीर प्रथा के उन्मूलन के लिए नारा बुलन्द किया गया।

अक्टूबर, 1946 ई. में अकाल और सूखे के समय में भी काँगड़ के जागीरदार ने किसानों से पूरा लगान वसूल करना चाहा, जिसका कृषकों ने विरोध किया। कुछ किसान महाराजा को शिकायत करने के लिए बीकानेर पहुँचे। इससे जागीरदार आग–बबूला हो गया। किसानों पर अमानवीय अत्याचार किए गए। काँगड़–कांड की सर्वत्र निन्दा की गई। अन्ततः यह संघर्ष 1948 ई. में बीकानेर राज्य में लोकप्रिय मंत्रिमंडल का गठन होने के बाद ही समाप्त हुआ। बीकानेर के किसान आंदोलन के प्रमुख हस्ताक्षरों में एक कुम्भाराम आर्य भी हैं, जिन्होंने परम्परागत् लाग–बाग, बेगार को न देने का बिगुल बजाया। वे बीकानेर प्रजा परिषद से जुड़े रहे। उन्होंने "किसान यूनियन क्यों" पुस्तक भी लिखी। सामंती व्यवस्था के विरोध और किसानों के हित में उनका संघर्ष स्वतंत्रता के उपरांत भी जारी रहा।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. किसान आंदोलन के लिए प्रसिद्ध बिजौलिया, राजस्थान के किस जिले में स्थित है ?
2. विजयसिंह पथिक का वास्तविक नाम क्या था ?

3. 'प्रताप' समाचार पत्र के संपादक कौन थे ?

4. 1931 ई. में हुए भरतपुर किसान आंदोलन के प्रमुख नेतृत्वकर्त्ता कौन थे ?

5. स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राजस्थान में हुए किस किसान हत्याकांड की तुलना महात्मा गांधी ने जलियांवाला बाग कांड से की?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. बिजौलिया किसान आंदोलन के संदर्भ में विजयसिंह पथिक की भूमिका को रेखांकित कीजिए।
2. बूंदी राज्य में हुए किसान आंदोलन का वर्णन कीजिए।
3. स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान शेखावटी क्षेत्र में हुए किसान आंदोलनों का वर्णन कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न :

1. स्वतंत्रता पूर्व हुए राजस्थान के प्रमुख किसान आंदोलनों की समीक्षा कीजिए।
2. बिजौलिया किसान आंदोलन की प्रमुख घटनाओं का वर्णन कीजिए।

अध्याय

4

राजस्थान में जनजातियों के आंदोलन

राजस्थान में स्थानीय सामन्तवाद व ब्रिटिश साम्राज्यवाद के मध्य अपवित्र गठबन्धन का प्रतिरोध सर्वप्रथम मेर, मीणा एवं भील जनजातियों ने किया।

मेर विद्रोह (1818–1824) :

मेरों द्वारा आबाद क्षेत्र अंग्रेजों के आगमन के पूर्व सीधे तौर पर किसी राजनीतिक सत्ता के नियंत्रण में नहीं था। मेरों द्वारा आबाद क्षेत्रों के भू–भाग मेवाड़, मारवाड़ एवं अजमेर के अन्तर्गत थे, किन्तु मेरों पर इनका राजनीतिक व प्रशासनिक नियंत्रण नहीं था। सर्वप्रथम अंग्रेजों ने उन्हें अपने पूर्ण नियंत्रण में लाने का प्रयास किया था। यही मेरों के विद्रोह का प्रमुख कारण बना।

सन् 1818 में अजमेर के अंग्रेज सुपरिन्टेन्डेन्ट एफ. विल्डर ने झाक एवं अन्य गांवों, जो मेरवाड़ा क्षेत्र के केन्द्र बिन्दु माने जाते थे, के साथ समझौता किया, जिसके अनुसार मेरों ने लूट–पाट न करने की सहमति प्रदान की। मार्च, 1819 में विल्डर ने किसी साधारण घटना को मेरों द्वारा उपर्युक्त समझौते को तोड़ना सिद्ध करते हुए मेरवाड़ा पर आक्रमण कर दिया। उसने नसीराबाद से सैनिक साथ लेकर मेरों के खिलाफ दण्डात्मक अभियान आरम्भ किया। मेरों को दण्डित किया गया तथा उन पर नियमित निगरानी रखने के लिए मेरवाड़ा क्षेत्र में पुलिस चौकियां स्थापित कीं। इस प्रकार अंग्रेजों द्वारा मेरों को घेरने की नीति आरम्भ की गई। अतः प्रतिक्रिया स्वरूप मेरों ने सन् 1820 के आरम्भ से ही जगह–जगह विद्रोह कर दिया तथा अपने क्षेत्रों से पुलिस चौकियों व थानों को हटाने का प्रयास किया। नवम्बर, 1820 में झाक नामक स्थान पर ब्रिटिश पुलिस के हत्याकाण्ड ने अंग्रेजों तथा साथ ही मेवाड़ व मारवाड़ राज्यों को भयभीत कर दिया था। यहां मेर विद्रोह अत्यन्त व्यापक व भयानक था। मेरों ने अनेक स्थानों पर अंग्रेजी पुलिस चौकियों को जला दिया था तथा सिपाहियों को मार दिया था। बढ़ते हुए मेर विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजी सेना की तीन बटालियनों, मेवाड़ एवं मारवाड़ की संयुक्त सेनाओं ने मेरों पर आक्रमण किया, जिसमें भारी जन–धन की हानि हुई। ये सेनाएँ जनवरी, 1821 के अन्त तक मेर विद्रोह का दमन करने में सफल रहीं।

1822 ई. में मेरों से गठित मेरवाड़ा बटालियन ब्यावर मुख्यालय पर स्थापित की गई। लम्बे समय तक सम्पूर्ण मेरवाड़ा क्षेत्र ब्रिटिश नियंत्रण में रहा। ब्रिटिश प्रशासन उन्नीसवीं सदी के अन्त तक कठोर दमनात्मक उपायों का सहारा लेकर मेरवाड़ा में शान्ति स्थापित करने में सफल रहा। बीसवीं सदी के

प्रारम्भिक वर्षों में अंग्रेजों ने मेरों में समाज सुधार गतिविधियों का प्रारम्भ किया। इस प्रकार अंग्रेज 1947 तक मेर विद्रोहों को नियन्त्रित करने में सफल रहे।

भील विद्रोह (1818–1860) :

भील मूलतः एक शान्तिप्रिय जनजाति रही है। वे अंग्रेजों के आगमन तक स्वतंत्र जीवन व्यतीत कर रहे थे तथा 1818 ई. के पश्चात् उनके ऊपर स्थापित अर्धसामंती व अर्ध औपनिवेशिक नियंत्रण ने उन्हें विद्रोह के लिए बाध्य किया।

1818 ई. में उदयपुर राज्य के भीलों ने अनेक कारणों से विद्रोह किया। एक तो भीलों पर कर थोपने के अंग्रेजी प्रयासो ने भीलों में असंतोष को जन्म दिया। दूसरा, अंग्रेजों की भील दमन नीति ने भीलों के मन में अंग्रेजों के विरुद्ध अनेक मनोवैज्ञानिक संदेह उत्पन्न कर दिए थे। तीसरा, ईस्ट इंडिया कंपनी के सहायक सन्धि के तुरन्त पश्चात् उदयपुर राज्य का आन्तरिक प्रशासन जेम्स टॉड ने अपने हाथ में ले लिया था तथा उसने भीलों पर राज्य का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए भीलों को अपने नियंत्रण में लाने का प्रयास किया। चौथा, 1818 की सन्धि के पश्चात् अधिकांश देशी सेनाओं को भंग कर दिया गया था। भील राज्य एवं जागीरदारों की सेना में नियमित अथवा अनियमित रूप से नियुक्त रहते थे तथा इन सेनाओं के भंग होने से बेरोजगारी के चलते उनमें असंतोष उत्पन्न होना स्वाभाविक ही था। पांचवा, भील अपनी पाल के समीप ही गांवों से रखवाली (चौकीदारी कर) नामक कर तथा अपने क्षेत्रों से गुजरने वाले माल व यात्रियों से बोलाई (सुरक्षा) नामक कर वसूल करते थे। जेम्स टॉड ने राज्य की आय व राजस्व में वृद्धि के प्रयासों के अन्तर्गत तथा भीलों पर कठोर नियंत्रण स्थापित करने के ध्येय से भीलों से उनके ये अधिकार छीन लिए थे। यह भील–विद्रोह का तात्कालिक कारण बना। भीलों ने अपने इन परम्परागत अधिकारों को छोड़ने से इन्कार करते हुए अंग्रेजों व उदयपुर राज्य के विरुद्ध विद्रोह कर दिया।

1818 ई. के अन्त तक उदयपुर राज्य के भीलों ने यह चेतावनी देते हुए अपनी स्वतंत्रता घोषित कर दी कि यदि सरकार उनके आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करेगी, तो वे विद्रोह के लिए बाध्य होंगे। भीलों ने अपने क्षेत्रों की नाकेबन्दी करते हुए राज्य के विरुद्ध बगावत कर दी। लम्बे समय तक राज्य के अधिकारी भील क्षेत्रों में नहीं घुस सके। 1820 ई. के आरम्भ में अंग्रेजी सेना का एक अभियान दल विद्रोही भीलों के दमन हेतु भेजा गया, किन्तु इसे सफलता नहीं मिली। अंग्रेजी सेना की इस असफलता ने भील–विद्रोह को और अधिक तीव्र कर दिया था। आगे चलकर जनवरी, 1823 ई. में ब्रिटिश व रियासत की संयुक्त सेनाओं ने दिसम्बर, 1823 ई. तक भील विद्रोह को दबाने में सफलता प्राप्त की।

उदयपुर राज्य के भील–विद्रोहों से प्रभावित होकर डूंगरपुर व बांसवाड़ा राज्यों के भीलों ने भी अल्प अशान्ति उत्पन्न की तथा 1825 में आदिवासी विद्रोहों की बिखरी हुई घटनाएँ घटीं। डूंगरपुर राज्य में स्थिति अधिक गम्भीर थी। इसलिए भीलों के दमन हेतु अंग्रेजी सेना भेजी गई, किन्तु वास्तविक संघर्ष आरम्भ होने के पूर्व ही भील मुखियाओं ने मई, 1825 में समझौता कर लिया। इसी प्रकार का समझौता डूंगरपुर राज्य की सिमूर वारु, देवल एवं नन्दू पालों के भीलों ने भी किया। उपर्युक्त समझौते के प्रावधान एकपक्षीय थे, किन्तु इनके माध्यम से अंग्रेज लम्बे समय तक डूंगरपुर राज्य में शांति बनाए रखने में सफल रहे।

उदयपुर राज्य के भीलों ने कभी भी इस प्रकार की शर्तें स्वीकार नहीं की तथा अंग्रेजों व उदयपुर

राज्य के समक्ष समर्पण नहीं किया। जनवरी, 1826 ई. में गिरासिया भील मुखिया दौलत सिंह एवं गोविन्दराम ने अंग्रेजों व उदयपुर राज्य के खिलाफ विद्रोह कर दिया था। 1826 ई. में लम्बी बातचीत के उपरान्त दौलत सिंह के आत्मसमर्पण के पश्चात् ही यह विद्रोह समाप्त हुआ। अंग्रेजों व उदयपुर राज्य ने 1838 ई. तक भीलों के प्रति उदार नीति अपनाई क्योंकि दमनात्मक सैनिक आक्रमणों के वांछित परिणाम प्राप्त नहीं हुए थे। यूं छुट–पुट भील उपद्रव की घटनाएँ जारी रही, किन्तु कुल मिलाकर 1838 तक उदयपुर राज्य में शान्ति रही। 1836 में बांसवाड़ा राज्य में भील उपद्रव हुए, जिन्हें अंग्रेजी सेना की सहायता से बांसवाड़ा के महारावल ने तुरन्त नियंत्रित कर दिया था।

अंग्रेजों ने बल प्रयोग के उपाय नहीं छोड़े, बल्कि मेरवाड़ा बटालियन की पद्धति पर भीलों के विरुद्ध लम्बी सैनिक योजना तैयार की, जिसके अन्तर्गत भीलों पर नियंत्रण स्थापित करने के उद्देश्य से भीलों की सेना के गठन का निर्णय किया। अप्रैल, 1841 में गवर्नर जनरल ने अपनी सलाहकार परिषद की सलाह पर मेवाड़ भील कोर के गठन को स्वीकृति प्रदान कर दी। मेवाड़ भील कोर का मुख्यालय उदयपुर राज्य में खैरवाड़ा रखा गया। मेवाड़ के भील क्षेत्रों में खैरवाड़ा एवं कोटड़ा में दो छावनियां स्थापित की गई।

अंग्रेजों के सैनिक उपाय कुछ समय तक ही भीलों को शान्त रख सके थे। 1844 में बांसवाड़ा राज्य में छुटपुट भील विद्रोह हुए। इसी समय माही काठा एजेन्सी के अन्तर्गत पोसीना (गुजरात) एवं सिरोही राज्य के भील व गिरासिया विद्रोही हो गए थे। बांसवाड़ा राज्य के भील विद्रोह को गुजरात में 1846 के कुंवार जिवे वसावो के नेतृत्व में गुजरात के भील–विद्रोह से बढ़ावा मिला। बांसवाड़ा राज्य ने अपने वकील कोठारी केसरीसिंह को सहायता हेतु वेर्स्टन मालवा ब्रिटिश एजेन्ट के पास भेजा तथा अंग्रेजी सेना की सहायता से 1850 ई. के अन्त तक भील–विद्रोह को कुचल दिया गया था।

1850 ई. से 1855 ई. के मध्य कोई बड़े भील–विद्रोह की घटना नहीं घटी, किन्तु दिसम्बर, 1855 में उदयपुर राज्य के कालीबास के भील विद्रोही हो गए थे। महाराणा ने मेहता सवाई सिंह को एक सेना लेकर 1 नवम्बर, 1856 को भीलों के दमन हेतु भेजा सेनाओं ने गांवो में आग लगा दी तथा भारी संख्या में भीलों को मौत के घाट उतार दिया गया। 1860 ई. तक निरन्तर छुटपुट भील–विद्रोह की घटनाएँ घटती रही। 1857 ई. की क्रांति के दौरान भी भील विद्रोहों की सम्भावना थी, किन्तु भील इस राष्ट्रीय क्रान्ति से अनभिज्ञ थे तथा राजकीय पलटनों ने अंग्रेजों के प्रति विद्रोह नहीं किया।

वर्ष 1861 में उदयपुर के समीप खैरवाड़ा क्षेत्र में भील उपद्रवों की घटनाएँ सामने आईं। 1863 ई. में कोटड़ा के भील हिंसक गतिविधियों में संलग्न हो गए, जिसकी जिम्मेदारी मेवाड़ भील कोर के कमान्डिंग अधिकारी ने उदयपुर राज्य पर सौंपी, क्योंकि राज्य के प्रशासनिक अधिकारी भीलों के साथ उचित व्यवहार नहीं कर रहे थे। इन आधारों पर हाकिम को स्थानान्तरित कर दिया तथा सैनिक कार्रवाई व शान्तिपूर्वक समझाकर भील उत्पात को शान्त कर दिया गया था। तत्पश्चात् 1867 ई. में खैरवाड़ा व डूंगरपुर के मध्य देवलपाल के भीलों ने उत्पात आरम्भ कर दिया, जिसे मेवाड़ भील कोर ने कुचल दिया था। 1872–75 के दौरान बांसवाड़ा में भील–विद्रोह की अनेक घटनाएँ घटीं।

बांसवाड़ा राज्य में चिलकारी व शेरगढ़ गांवों के भील छापामार गतिविधियों द्वारा अशान्त रहे। 1873 – 74 के दौरान इन गांवों के भीलों ने खुला विद्रोह कर दिया था उनकी गतिविधियाँ मध्य भारत

के सैलाना व झाबुआ राज्यों तक फैल गई थी। 1881–1882 में उदयपुर राज्य के भील अंग्रेजों व राज्य के विरुद्ध उठ खड़े हुए थे। यह 19वीं सदी का सबसे भयानक भील विद्रोह सिद्ध हुआ। असल में यह लम्बे समय से एकत्रित भील आक्रोश का विस्फोट था।

26 मार्च, 1881 की रात में राज्य की सेनाएँ मामा अमानसिंह (राज्य का प्रतिनिधि) एवं लोनारगन (अंग्रेज प्रतिनिधि) के नेतृत्व में बारापाल पहुँची। इसके साथ महाराणा का निजी सचिव श्यामलदास भी था। 27 मार्च को सेना ने बारापाल में सैंकड़ों भील झोंपड़ियों को जलाकर राख कर दिया। 28 मार्च को पूरे दिन सैनिक अभियान जारी रहा था तथा बारापाल के आस–पास भीलों के झोंपड़ों को जलाया जाता रहा। फौज की इन कार्रवाइयों से बचने के लिए अधिकांश भीलों ने परिवार सहित स्वयं अपने घरों को उजाड़कर सघन जंगलों व पहाड़ियों की ऊँची चोटियों पर पहुंचकर सुरक्षात्मक स्थिति प्राप्त कर ली थी।

अपनी स्थिति सुदृढ़ कर भीलों ने मार्ग में बाधा उत्पन्न कर राज्य की सेनाओं को आगे बढ़ने से रोक दिया। निराश सेना व सेनापतियों ने सुरक्षात्मक स्थिति लेकर रिखवदेव में डेरे डाल दिए थे। यहाँ लगभग 8000 भीलों ने इन्हें घेर लिया। इस विद्रोह के प्रमुख नेता बीलखपाल का गामेती नीमा, पीपली का खेमा एवं सगातरी का जोयता थे। सैनिक अधिकारियों ने भीलों के साथ शान्ति–समझौते के प्रयास किए, किन्तु कोई सफलता नहीं मिली। महाराणा के निजी सचिव श्यामलदास ने रिखवदेव मन्दिर के पुजारी खेमराज भंडारी के माध्यम से भील नेताओं से वार्ता आरम्भ की। अन्त में 25 अप्रैल, 1881 को भीलों के साथ एक समझौता हो गया। राज्य के अधिकारी आधा बराड़ कर छोड़ने, भविष्य में भीलों को जनगणना कार्यों से कष्ट न पहुँचाने एवं विद्रोही भीलों को माफी देने पर सहमत हो गए। भीलों ने राज्य के नियमों के पालन करने का वचन देते हुए कानून–विरोधी गतिविधियों में संलग्न न होने की स्वीकृति दी। उपर्युक्त समझौते ने एक भयंकर भील–विद्रोह को शान्त अवश्य कर दिया था, किन्तु पूर्ण शान्ति स्थापित नही हो पाई थी।

यद्यपि मेवाड़ की भील समस्या को 19वीं सदी के अन्त तक पर्याप्त सीमा तक सुलझा लिया गया था, किन्तु डूंगरपुर व बासंवाड़ा के भीलों पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। अतः 20वीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में डूंगरपुर व बासंवाड़ा राज्यों में गोविन्द गिरि के नेतृत्व में शक्तिशाली भील आन्दोलन आरम्भ हुआ। गोविन्द गिरि ने भीलों के उत्थान हेतु समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन आरम्भ किया था जो आगे चलकर राजनीतिक –आर्थिक विद्रोह में परिवर्तित हो गया था। गोविन्द गिरि डूंगरपुर में बेडसा नामक गांव के निवासी एवं जाति से बंजारा थे। वे स्वयं छोटे किसान थे। उनकी निर्धन आर्थिक दशा एवं उनके पुत्रों व पत्नी की मृत्यु ने उन्हें अध्यात्म की ओर प्रेरित किया तथा वे संन्यासी बन गए। वे कोटा, बूँदी अखाड़े के साधु राजगिरि के शिष्य बन गए। उन्होंने धूनी स्थापित कर एवं निशान (ध्वज) लगाकर आस–पास के क्षेत्र के भीलों को आध्यात्मिक शिक्षा देना आरम्भ किया।

गोविन्द गिरि के विचारों ने भीलों को जागृत किया एवं उन्हें अपनी दशाओं व अधिकारों के प्रति जागरूक बनाया। इन विचारों ने उन्हें यह सोचने के लिए भी बाध्य कर दिया था कि उनके वर्तमान शासकों ने उन्हें पराधीन कर रखा है, जबकि वे स्वयं इस भूमि के स्वामी थे एवं इन्हें इस पर पुनः शासन करना चाहिए। इस प्रकार यह समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन आर्थिक एवं राजनीतिक आन्दोलन में बदलता जा रहा था।

गोविन्द गिरि की उपर्युक्त शिक्षाओं व कल्याणकारी गतिविधियों के कारण उनका भगत पंथ भीलों में अत्यधिक लोकप्रिय हो रहा था। गोविन्द गिरि के बढ़ते हुए प्रभाव से राजा, उनके अधिकारी एवं जागीरदार चिंतित होने लगे थे कि उसका बढ़ता हुआ प्रभाव कहीं उनकी सत्ता को पलट न दे। अतः वे इन उपदेशकों अथवा प्रचारकों को अपने राज्य अथवा जागीर की सीमाओं से बाहर निकल जाने पर बाध्य करने लगे, जिससे वर्गीय कटुता बढ़ने लगी तथा समाज एवं धर्म सुधार आन्दोलन राजनीतिक स्वरूप प्राप्त करने लगा था। सन् 1908 में गोविन्द गिरि ने राजपूताना छोड़कर 1910 तक एक कृषक के रूप में गुजरात के सूंथ एवं ईडर राज्य के भीलों में कार्य किया। उन्होंने इन राज्यों के भीलों को जाग्रत कर उनका शक्तिशाली जन आन्दोलन तैयार किया था। ईडर राज्य के अन्तर्गत पाल–पट्टा में भील आन्दोलन से ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई कि वहाँ के जागीरदार ने भीलों के साथ 24 फरवरी, 1910 को एक समझौता किया। इस समझौते के अन्तर्गत कुल 21 शर्तें थीं जो भीलों के अधिकारों से सम्बंध रखती थीं। इस समझौते ने राजस्थान व गुजरात के भीलों को सामन्ती शोषण के विरुद्ध लड़ने का उत्साह दिया। यह समझौता गोविन्द गिरि के आन्दोलन की सफलता कहा जा सकता है। सन् 1911 के आरम्भ में वह डूंगरपुर स्थित अपने मूल स्थान बेडसा वास आए। वहां उसने धूनी स्थापित कर भीलों को आधुनिक पद्धति पर उपदेश देना आरम्भ किया। सन् 1911 में उन्होंने अपने पंथ को नए रूप में संगठित किया तथा धार्मिक शिक्षाओं के साथ–साथ भीलों को सामन्ती व औपनिवेशिक शोषण से मुक्ति की युक्ति भी समझाने लगे। उन्होंने प्रत्येक भील गांव में अपनी धूनी स्थापित की तथा इनकी रक्षा हेतु कोतवाल नियुक्त किए गए थे। गोविन्द गिरि द्वारा नियुक्त कोतवाल केवल धार्मिक मुखिया ही नहीं थे, बल्कि अपने क्षेत्र के सभी मामलों के प्रभारी थे। वे भीलों के मध्य विवादों का निपटारा भी करते थे। इस प्रकार अन्य अर्थो में गोविन्द गिरि की समानान्तर सरकार चलने लगी, किन्तु दूसरी ओर राजा व जागीरदारों द्वारा उनके शिष्यों का उत्पीड़न भी जारी रहा।

गोविन्द गिरि

बेडसा गोविन्द गिरि की गतिविधियों का केन्द्र बन गया था। ईडर, सूंथ, बांसवाड़ा व डूंगरपुर राज्यों तथा पंच महल व खेड़ा जिले के भील वहां आने लगे। इस आन्दोलन का प्रभाव सम्पूर्ण दक्षिणी राजस्थान के राज्यों व बम्बई सरकार के अन्तर्गत गुजरात के भील क्षेत्रों में फैल गया था। उनके बढ़ते हुए प्रभाव से भयभीत होकर अप्रैल, 1913 में डूंगरपुर पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया तथा उनका सभी सामान जब्त कर लिया था व उन्हें उनके धार्मिक पंथ को छोड़ने के लिए धमकाया। सामन्ती एवं आपैनिवेशिक सत्ता द्वारा उत्पीड़क व्यवहार ने गोविन्द गिरि एवं उनके शिष्यों को सामन्ती व औपनिवेशिक दासता से मुक्ति प्राप्त करने हेतु भील राज की स्थापना की योजना बनाने की ओर प्रेरित किया।

मानगढ़ धाम

गोविन्द गिरि अक्टूबर, 1913 में मानगढ़ पहाड़ी पर पहुँचे तथा भीलों को पहाड़ी पर एकत्रित होने के लिए सन्देशवाहक भेजे गए। धीरे–धीरे भारी संख्या में भील पहाड़ी पर आने लगे तथा साथ में राशन–पानी व हथियार भी ला रहे थे। इन गतिविधियों ने सूंथ, बांसवाड़ा, डूंगरपुर एवं ईडर राज्यों को चौकन्ना कर दिया था। इन सभी राज्यों ने अपने सम्बन्धित अंग्रेज अधिकारियों से मानगढ़ पर भीलों के जमावड़े व पालों में युद्ध के लिए तैयारी कर रहे भीलों को कुचलने की प्रार्थना की। 6 से 10 नवम्बर, 1913 में मेवाड़ भील कोर की दो कम्पनियां, 104 वेलेजली रायफल्स की एक कम्पनी व सातवीं राजपूत रेजीमेन्ट की एक कम्पनी मानगढ़ पर भीलों के जमावड़े को कुचलने के लिए पहुंची। विफल वार्ताओं के बाद 17 नवम्बर, 1913 को अंग्रेजी फौजों ने मानगढ़ की पहाड़ी पर आक्रमण कर दिया। मानगढ़ की पहाड़ी के सामने दूसरी पहाड़ी पर अंग्रेजी फौजों ने तोप व मशीन गनें तैनात कर रखी थीं एवं वहीं से गोला बारूद दागे जाने लगे। लगभग एक घन्टे तक मानगढ़ पर भीलों ने सेना का सफल मुकाबला किया, किन्तु आधुनिक युद्ध सामग्री के समक्ष अधिक समय तक वे टिक नहीं सके। मानगढ़ की पहाड़ी के नीचे तैनात अंग्रेजी फौज पहाड़ी को घेरते हुए ऊपर पहुंची तथा भीलों को अंधाधुंध गोलियों से भूनना आरम्भ कर दिया। भीलों में भी भगदड़ मच गई। कुछ ही समय में पहाड़ी पर भीलों ने आत्मसमर्पण कर दिया, उसके उपरान्त भी भीलों का कत्लेआम जारी रहा। अंग्रेजी दस्तावेजों के अनुसार कुल 100 भील मारे गए थे तथा 900 भीलों को बन्दी बना लिया गया। इनके साथ ही गोविन्द गिरि व पुन्जीया को भी बन्दी बना लिया गया था।

भील आन्दोलन कुचल दिया गया था। किन्तु भील अपने गुरू की गिरफ्तारी को लेकर आन्दोलित थे। भीलों में गोविन्द गिरि भारी लोकप्रिय थे क्योंकि उन्होंने उन्हें अनेक बुराइयों से मुक्ति दिलाई थी। अतः गोविन्द गिरि की लोकप्रियता के कारण उनकी आजीवन कारावास की सजा को दस वर्ष की सजा में बदल दिया गया था तथा सात वर्ष के पश्चात् इस शर्त पर रिहा कर दिया गया था कि वे सूंथ, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, कुशलगढ़, एवं ईडर राज्यों में प्रवेश नहीं करेंगे। वे सरकारी निगरानी में अहमदाबाद सम्भाग के अन्तर्गत पंचमहल जिले के झालोद नामक गांव में रहने लगे। इसी स्थान पर सभी क्षेत्रों के भगत भील उनके प्रवचन सुनने वहाँ पहुँचने लगे।

उदयपुर राज्य में मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आन्दोलन :

असहयोग आन्दोलन की जागृति के प्रभाव में 1921 में मेवाड़ व अन्य राज्यों के भीलों व गिरासियों ने मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आन्दोलन छेड़ा। मोतीलाल तेजावत उदयपुर राज्य के झाडोल ठिकाने के अन्तर्गत कोलियारी गांव के निवासी व ओसवाल बनिया जाति के थे। उन्होंने कुछ समय झाडोल ठिकाने के कामदार के रूप में भी कार्य किया था। इसी दौरान वह इस ठिकाने के भीलों के सम्पर्क में आए। झाडोल के जागीरदार के साथ कुछ मतभेद हो जाने के कारण उन्होंने ठिकाने की नौकरी छोड़कर परचून का व्यवसाय आरम्भ किया। वह भील क्षेत्रों में घूम–घूमकर मिर्च मसाला आदि बेचते थे तथा पोसीना ठिकाने में सामलिया नामक स्थान पर लगने वाले चित्रे–विचित्रे के मेले में नियमित रूप से दुकान लगाते थे। अतः अपने व्यापार के माध्यम से वह उदयपुर राज्य के भीलों के अत्यधिक निकट सम्पर्क में आए।

मोतीलाल तेजावत की समाज सुधार की गतिविधियों ने उन्हें भीलों के मध्य काफी लोकप्रिय बना दिया था। इन उपदेशों के साथ उन्होंने आदिवासियों का एकी आन्दोलन भी आरम्भ किया। एकी आन्दोलन का उद्देश्य राज्यों व जागीरदारों द्वारा किए जाने वाले भीलों पर सभी प्रकार के शोषण के विरुद्ध संयुक्त रूप से विरोध करना था। मोतीलाल तेजावत की गतिविधियां तो झाडोल जागीर तक ही सीमित थी, किन्तु उनका प्रभाव अन्य भील क्षेत्रों में भी तीव्र गति से फैल रहा था। उनके बढ़ते हुए प्रभाव से सत्ताधारियों का चिन्तित होना स्वाभाविक था, अतः सत्ताधारियों ने इसे एक चुनौती के रूप में लेते हुए भीलों पर जुल्म करने के कठोरतम कदम उठाए। इसी दौरान तेजावत विजय सिंह पथिक अन्य नेताओं से मिले तथा उनके साथ विचार–विमर्श कर भीलों की समस्याओं के समाधान हेतु कार्यक्रम तैयार किया। वह असहयोग आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे तथा वह भीलों का ऐसा ही आन्दोलन छेड़ना चाहते थे। इस समय तक बिजौलिया किसान आन्दोलन अपनी चरम सीमा पर था, जिसने तेजावत को भी उत्साहित किया तथा जब उसे बिजौलिया के नेताओं से समर्थन का आश्वासन मिल गया, तो उसने अपने कार्यक्रम को अन्तिम रूप प्रदान किया। जुलाई, 1921 में उन्होंने भीलों का करबन्दी सहित असहयोग आन्दोलन आरम्भ कर दिया था।

झाडौल का शासक (सामंत) इस स्थिति से चिंतित हो गया था एवं स्थिति को नियंत्रण में लाने के ध्येय से उसने 19 अगस्त, 1921 को मोतीलाल तेजावत को गिरफ्तार कर लिया। तेजावत की गिरफ्तारी ने भीलों को और अधिक उत्तेजित कर दिया था। अपने नेता को मुक्त कराने के लिए हजारों भील एकत्रित हो गए। भीलों के भारी जमावड़े ने तेजावत को मुक्त करने हेतु ठाकुर को बाध्य कर दिया था। इसके पश्चात्

तेजावत ने अपना आन्दोलन और भी तीव्र कर दिया।

दिसम्बर, 1921 तक उदयपुर राज्य में किसान एवं आदिवासी आन्दोलनों के कारण एक विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो गई थी। भील–आन्दोलन के बढ़ते हुए प्रभाव को देखते हुए ब्रिटिश अधिकारियों ने 1 जनवरी, 1922 को भीलों को कुछ छूट देने का निर्णय लिया एवं तदनुसार जागीरदारों को सलाह दी गई थी। आन्दोलन के परिणामस्वरूप राज्य का यह निर्णय समर्पण का सूचक था, जिसने भीलों की इच्छा शक्ति को और अधिक बढ़ा दिया था।

जनवरी, 1922 में मोतीलाल तेजावत ने सिरोही राज्य में प्रवेश किया जहाँ भारी संख्या में भील व गिरासिया आदिवासी रहते थे। वे उदयपुर के आन्दोलन से बहुत प्रभावित थे एवं सिरोही में ऐसा ही आन्दोलन छेड़ना चाहते थे। वास्तव में मोतीलाल तेजावत उदयपुर राज्य के भय से उदयपुर से भागकर सिरोही नहीं गए थे, बल्कि उन्हें सिरोही के भीलों व गिरासियों ने अपने मार्गदर्शन हेतु आमन्त्रित किया। इस समय तक उन्हे यह भी पूरा भरोसा हो गया था कि उदयपुर में उनके अनुयायी उनकी अनुपस्थिति में आन्दोलन चलाने में सक्षम थे।

सिरोही राज्य मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आदिवासी आन्दोलन का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र बना। सिरोही राज्य में भी आदिवासियों की जीवन दशाएँ मेवाड़ राज्य के भीलों के समान ही थी। सन् 1922 में तेजावत ने सिरोही राज्य के आदिवासियों में प्रवेश किया। यहाँ भी उन्होंने उदयपुर के भीलों की पद्धति पर गिरासिया आदिवासियों में समाज सुधाार के कार्य आरम्भ किए। उसने गिरासियों के उत्थान हेतु समाज सुधार के साथ–साथ एक आर्थिक संघर्ष भी आरम्भ किया। जनवरी, 1922 में तेजावत ने भ्रमण करते हुए भीलों व गिरासियों की अनेक सभाएँ की तथा उन्हें कर बन्दी व राज्य के साथ असहयोग हेतु खुला आह्वान दिया।

11 फरवरी, 1922 को कांग्रेस ने असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया था तथा ब्रिटिश अधिकारियों ने सम्पूर्ण भारत में किसान व आदिवासी आन्दोलनों को शक्तिपूर्वक कुचलने की नीति बनाई। दीवान रमाकान्त मालवीय ने गांधी, पथिक व राजस्थान सेवा संघ के नेताओं की सहायता से सिरोही के आदिवासी आन्दोलन को समाप्त करने के प्रयास किए थे, किन्तु अपने प्रयासों की असफलता से झुंझलाकर गिरासियों के मुख्य गाँवों सियावा में कर वसूली के लिए सेना भेजने का निर्णय लिया। राज्य व अंग्रेजों की सेना ने इस गाँव पर 12 अप्रैल, 1922 को आक्रमण कर दिया। इस सैनिक कार्रवाई में अनेक गिरासियों की जाने गई तथा फौज ने उनके घर, अनाज व पशु जलाकर उनको भारी नुकसान पहुँचाया। इसके पश्चात् भी सैनिक अभियान जारी रहा। 5 मई, 1922 को सेना ने बलोरिया गांव पर आक्रमण किया तथा इस गांव का बहुत बड़ा भाग जला दिया व इसमें 11 आदिवासियों की जानें गईं। 6 मई को भूला एवं नवावास नामक गांव को सैनिक आक्रमणों का शिकार होना पड़ा तथा इन गांवों की अधिकांश झोंपड़ियों को जलाकर राख कर दिया गया था।

सिरोही राज्य व अंग्रेजी सेना की संयुक्त कार्रवाइयों ने भीलों व गिरासियों का मनोबल तोड़ दिया था। ऐसी स्थिति में भूला, नवावास, वलोलिया व अन्य प्रभावित गांवों के आदिवासी मुखिया सिरोही के दीवान व पॉलिटिकल ऑफिसर से 11 व 12 मई, 1922 को मिले एवं एकी की शपथ तोड़ने हेतु सहमति व्यक्त की। इन अधिकारियों के समक्ष आदिवासी मुखियाओं ने एकी आन्दोलन की निन्दा करते हुए इससे

अपने आपको अलग घोषित किया। इस प्रकार सिरोही के आदिवासी आन्दोलन को सत्ता पक्ष द्वारा कुचल दिया गया। अधिकारियों की मान्यता थी कि आदिवासियों ने एकी आन्दोलन को किसी राजनीति के तहत स्थगित कर दिया है एवं इस आन्दोलन के पुनर्जीवित होने की पूर्ण सम्भावना है। अतः दीवान व अधिकारियों ने सिरोही के शासक को सुझाव दिया कि आदिवासियों को कुछ छूट व सहूलियत देकर ही पूर्णतः शान्ति स्थापित की जा सकती है।

मोतीलाल तेजावत ने 1923 ई. के आरम्भ में पुनः एकी आन्दोलन आरम्भ करने का प्रयास किया, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। फिर भी सिरोही राज्य में भाखर, सांथपुर, पिन्डवाड़ा आदि परगनों में अशान्ति बनी रही। सन् 1927 में जाकर आदिवासी पंचों ने सिरोही राज्य के अधिकारियों के साथ समझौता किया। तत्पश्चात् इन परगनों में शान्ति स्थापित की जा सकी। मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में आरम्भ हुआ सिरोही का आदिवासी आन्दोलन सही अर्थों में 1929 में तेजावत की गिरफ्तारी के पश्चात् ही समाप्त हुआ।

उदयपुर व सिरोही राज्यों के भील व गिरासिया 1921–29 के मध्य मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में अशान्त बने रहे। राज्यों, जागीरदारों व अंग्रेजों ने अशिक्षित व भोले आदिवासियों पर सभी प्रकार के अत्याचार किए। इसी क्रम में सैनिक कार्रवाइयों की एक श्रृंखला आरम्भ की गई थी, जिसने आदिवासियों का मनोबल तोड़ दिया था। जनवरी, 1924 के पश्चात् तेजावत भूमिगत हो गए, क्योंकि उनकी गिरफ्तारी पर उदयपुर, सिरोही व ईडर राज्यों ने पुरस्कार घोषित कर दिए। अधिकारियों की यह स्पष्ट मान्यता थी कि जब तक तेजावत को नहीं घेरा जाएगा, तब तक आदिवासी आन्दोलन शान्त नहीं हो सकता। 3 जून, 1929 को ईडर राज्य की पुलिस ने खेडब्रह्म नामक गांव में तेजावत को गिरफ्तार कर लिया। ईडर पुलिस ने उसे उदयपुर राज्य को सौंप दिया, जहाँ उनके विरुद्ध आपराधिक मुकदमा चलाया गया। सन् 1936 तक इसमें कोई अन्तिम निर्णय नहीं हुआ तथा तेजावत को जेल में ही रखा गया। उन्हें 3 अप्रैल, 1936 को जेल से इस शर्त पर रिहा किया गया कि वह कोई आन्दोलनात्मक कार्य नहीं करेंगे तथा उदयपुर राज्य की अनुमति के बिना उदयपुर शहर से बाहर नहीं निकलेंगे। उदयपुर राज्य ने उनके गुजारे के लिए 30 रुपये प्रतिमाह का भत्ता स्वीकृत किया। पुनः उन्हें जनवरी, 1945 में बन्दी बना लिया गया था, जब उन्होंने भौमट क्षेत्र में प्रवेश करने की कोशिश की तथा उसे फरवरी, 1947 में जेल से रिहा किया गया।

मीणा विद्रोह (1851–1860)

नई भूमि व राजस्व व्यवस्था के प्रति अपना रोष प्रकट करने के लिए 1851 ई. में उदयपुर राज्य के जहाजपुर परगने के मीणाओं ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया था। इस क्षेत्र की मीणा जाति पर्याप्त रूप में किसी भी राजनीतिक सत्ता से मुक्त थी, केवल महाराणा मेवाड़ की प्रतीकात्मक सत्ता स्वीकार करते थे। कर्नल टॉड ने इनका जीवन्त विवरण प्रस्तुत किया है, जो उपर्युक्त तथ्य को सिद्ध करता है। ये अंग्रेज ही थे, जो इस क्षेत्र पर उदयपुर राज्य का कठोर नियंत्रण स्थापित कर सके। ब्रिटिश शासित अजमेर प्रान्त के समीप स्थित इस मीणा क्षेत्र पर राज्य की सत्ता स्थापित हो सकी थी। वास्तव में अंग्रेज आदिवासी समुदायों के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रसित थे। इसलिए अंग्रेज इन लोगों के साथ बड़ी कठोरता का व्यवहार करते थे। 1820 – 21 में अंग्रेजों द्वारा मेरों के दमन से मीणा समुदाय के लोग भली भाँति परिचित थे। अतः जहाजपुर क्षेत्र के मीणा समुदाय तथा अंग्रेज अधिकारियों के मध्य विरोध अस्तित्व में आया।

मीणा व भीलों के विद्रोह केवल अंग्रेजों के विरुद्ध ही नहीं थे, बल्कि वे सम्बन्धित रियासतों के विरुद्ध भी थे, जिनके माध्यम से अंग्रेज अपनी नीतियों को कार्यान्वित करवा रहे थे।

महाराणा मेवाड़ ने 1851 ई. में जहाजपुर परगने में नया हाकिम नियुक्त किया। नवनियुक्त हाकिम मेहता रघुनाथ सिंह परगने से धन कमाने में व्यस्त था। उसने अपना ध्यान मुख्य तौर पर परगने की आय में वृद्धि तथा खर्चे मे कमी पर केन्द्रित किया। प्रशासनिक सुधारों के नाम पर जनता से धन वसूली की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप बहुसंख्यक मीणा समुदाय ने विप्लव का रास्ता अपनाया। विद्रोही मीणाओं ने ना केवल राजस्व अधिकारियों व सूदखोरों को लूटा, बल्कि समीप स्थित अजमेर–मेरवाड़ा के अंग्रेजों के प्रान्त पर भी धावे मारे। अंग्रेज अधिकारियों की शिकायतों के आधार पर महाराणा ने हाकिम का स्थानान्तरण कर मेहता अजीत सिंह को विद्रोही मीणाओं के दमन के कठिन कार्य को पूरा करने के उद्देश्य से हाकिम नियुक्त किया। वह उदयपुर से एक सेना लेकर रवाना हुआ। इसके साथ शाहपुरा, बनेड़ा, बिजौलिया, भैंसरोड़, जहाजपुर एवं मांडलगढ़ के जागीरदारों की सेनाएँ सम्मिलित थी। इनके अतिरिक्त भीम पल्टन व एकलिंग पल्टन के सिपाही दो तोपों सहित इस सेना के साथ जोड़े गए। एजेन्ट टू गवर्नर जनरल इन राजपूताना के कहने पर जयपुर, टोंक एवं बूँदी राज्यों ने अपने राज्य की सीमाओं पर चौकसी पक्की कर दी, जिससे जहाजपुर के मीणाओं को अन्य राज्यों के मीणाओं द्वारा सहायता व समर्थन की सम्भावना को समाप्त कर दिया गया।

उदयपुर की सेनाओं ने छोटी लुहारी व बड़ी लुहारी नामक गांवों पर आक्रमण किया, जो मीणा–विद्रोह के मुखियाओं के गांव थे। सेनाओं ने दोनों ही गांवों को नष्ट कर दिया तथा मीणा सपरिवार मनोहरगढ़ एवं देवखेड़ा की पहाड़ियों की ओर भागे, वहाँ उन्होंने रक्षात्मक स्थिति प्राप्त कर ली थी। इसी बीच जयपुर, बूँदी, टोंक राज्यों से तमाम प्रतिबन्धों के उपरान्त भी लगभग 5000 मीणा लोग जहाजपुर के मीणाओं की सहायतार्थ पहुँच गए थे। उदयपुर की सेनाओं ने भरसक प्रयत्न किए, किन्तु सघन झाड़ियों व पहाड़ी प्रदेश होने के कारण सैनिक कार्रवाई में अनेक रुकावट उत्पन्न हो रही थी, इसलिए इस सेना को कोई सफलता नहीं मिली। राज्य सेना के लगभग 57 सिपाही इस अभियान में मारे गए।

दिसम्बर, 1854 में एजेन्ट टू गवर्नर जनरल इन राजपूताना, मेवाड़ का पॉलिटिकल एजेन्ट, व हाड़ौती का पॉलिटिकल एजेन्ट संयुक्त रूप से सेना सहित जहाजपुर पहुँचे तथा जहाजपुर व ईटोदा में एक महिने तक रुके रहे। जनवरी, 1855 के अन्त तक मीणा विद्रोही इस सेना के समक्ष आत्मसमर्पण के लिए बाध्य हो गए थे। भविष्य में मीणाओं का सामना करने के उद्देश्य से फरवरी, 1855 में जयपुर, अजमेर, बूंदी एवं मेवाड़ की सीमाओं पर स्थित देवली में एक सैनिक छावनी स्थापित की। मीणाओं पर नियमित निगरानी रखने के ध्येय से छावनी के आस–पास पुलिस थाने भी स्थापित किए गए। इस प्रकार मीणाओं का विद्रोह दबाया जा सका।

1855 ई. में देवली छावनी को नवगठित अनियमित सेना का मुख्यालय बनाया गया था, जो 1857 से 1860 के दौरान 42वीं देवली रेजीमेन्ट अथवा मीणा बटालियन के नाम से जानी जाती रही। 1921 में 42वीं देवली रेजीमेन्ट व 43वीं एरिनपुरा रेजीमेन्ट को समाप्त कर दिया। उनके स्थान पर मीणा कोर की स्थापना की गई थी। देवली ने इस सेना का गठन राजस्थान में आदिवासियों के प्रति अंग्रेजी नीति का विस्तार कहा जा सकता है। वास्तव में इस तरह के दमनात्मक उपायों का विस्तार आदिवासी समस्या

का समाधान नहीं था, किन्तु नवगठित अमानवीय व अपवित्र औपनिवेशिक व सामन्ती मेल द्वारा स्थापित राजनीतिक सत्ता से और कुछ आशा नहीं की जा सकती थी।

पुनः जनवरी, 1860 में जहाजपुर के मीणाओं ने विद्रोह कर दिया। महाराणा ने 29 जनवरी, 1860 को चन्दसिंह के नेतृत्व में जहाजपुर की ओर एक सेना भेजी। उसने गाढ़ोली व लुहारी गांवों पर आक्रमण किया। राज्य सेना ने गांवों को लूटा व आगजनी भी की। भारी संख्या में मीणाओं को बन्दी बनाया गया तथा 6 लोगों को तोप से उड़ा दिया गया था। मीणाओं पर पुलिस थानों में नियमित उपस्थिति थोप दी गई थी। इस प्रकार जहाजपुर का मीणा–विद्रोह अन्तिम रूप से नियंत्रित हो गया था।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. मेरवाड़ा बटालियन का मुख्यालय कहां स्थित था?
2. मेवाड़ भील कोर का मुख्यालय कहां स्थित था ?
3. भगत पंथ के प्रतिपादक कौन थे ?
4. एकी आंदोलन किसने आरम्भ किया?
5. 1921 ई. में देवली रेजीमेंट और एरिनपुरा रेजीमेंट को समाप्त कर किस नवीन बटालियन का गठन किया गया?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. उन्नीसवीं सदी में राजस्थान में हुए भील–विद्रोह के कारणों को रेखांकित कीजिए।
2. भील समुदाय में हुए समाज सुधार आंदोलन में गोविन्द गिरि की भूमिका का वर्णन कीजिए।
3. मोतीलाल तेजावत के नेतृत्व में उदयपुर प्रान्त में हुए आदिवासी विद्रोहों का वर्णन कीजिए।

निबंधात्मक प्रश्न :

1. स्वतंत्रता पूर्व हुए राजस्थान के प्रमुख आदिवासी आंदोलनों की समीक्षा कीजिए।
2. 1851 ई. से 1860 ई. के मध्य राजस्थान में हुए मीणा–विद्रोह की प्रमुख घटनाओं का वर्णन कीजिए।

अध्याय

5

राजस्थान में जनजागृति और प्रजामण्डल

1857 ई. का प्रथम स्वाधीनता संग्राम सफल नहीं हो पाया, परंतु जनता में नवचेतना व जागृति की भावना अवश्य उत्पन्न हो गई। इसके लिए निम्नांकित कारक उत्तरदायी थे :–

- राजस्थान के सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक वैभव की आत्मानुभूति जब हिन्दी, गुजराती और बांग्ला साहित्य से राजस्थानी चरित्रों के बारे में हुई, तब जनता अपने प्राचीन गौरव के प्रति सजग हो उठी।

- आर्य समाज की शाखाओं ने भी राजस्थान में स्वतंत्रता के प्रति विचारों को फैलाकर राष्ट्रीय चेतना प्रज्ज्वलित की। राजनीतिक जागृति की भावना को विकसित करने में स्वामी दयानंद सरस्वती और स्वामी विवेकानंद का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

- साहित्य और पत्रकारिता ने भी राष्ट्रीय भावना को जगाया। बंकिमचन्द्र चटर्जी के 'वन्देमातरम्' गान से राजस्थान गूंज उठा। राजस्थान समाचार, देश हितैषी, परोपकारक आदि समाचार पत्रों ने भी राष्ट्रीय भावना की जागृति में महत्वपूर्ण सहयोग दिया। उदयपुर से 'सज्जन कीर्ति सुधाकर' तथा अजमेर से एक अंग्रेजी साप्ताहिक 'राजस्थान टाइम्स' का सन् 1885 ई. में प्रकाशन शुरू हुआ। अखबारों के माध्यम से लोगों में राष्ट्रीय और राजनीतिक चेतना का उदय हुआ।

- छप्पनियां के भीषण अकाल के समय अंग्रेजों की ओर से जो उपेक्षा बरती गई, उसके कारण अंग्रेजों के प्रति विरोध का वातावरण बना। अतः जनता के मन में स्वतंत्रता प्राप्ति के विचार बनने आरम्भ हो गए।

- एडवर्ड सप्तम के राज्यारोहण समारोह के समय उदयपुर के महाराणा फतेह सिंह को आमंत्रित किया गया। इसमें शामिल होने के लिए उन्होंने दिल्ली प्रस्थान किया। तभी उन्हें रास्ते में शाहपुरा के क्रांतिकारी केसरी सिंह बारहठ ने 'चेतावनी रा चूंगटियाँ' नामक एक रचना भेंट की। उससे उनमें आत्मसम्मान की भावना जागी और उन्होंने 'दिल्ली दरबार' के समारोह में शामिल न होने का निश्चय किया। महाराणा के इस कार्य से राजस्थान की जनता में एक नवचेतना की लहर दौड़ गई।

- अंग्रेजों की आर्थिक नीतियों के कारण राजस्थान का आर्थिक जीवन अस्त–व्यस्त हो गया। बेरोजगारी की स्थिति उत्पन्न हो गई। असंतोष का वातावरण उत्पन्न हो गया।

- 1885 ई. में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना हुई। 1887 ई. में गवर्नमेंट कॉलेज, अजमेर के छात्रों ने कांग्रेस कमेटी का गठन किया। आगे चलकर जनता में राष्ट्रीय भावना उत्पन्न हुई, जो निरंतर बलवती होती गई। 1888 ई. में कांग्रेस के इलाहाबाद अधिवेशन में अजमेर के गोपीनाथ माथुर, किशनलाल और

हरविलास शारदा राजस्थान के प्रतिनिधि बनकर गए।

1918 ई. में दिल्ली में आयोजित कांग्रेस अधिवेशन में राजस्थान के कई व्यक्तियों ने भाग लिया, जिसके परिणामस्वरूप इनका सम्पर्क ब्रिटिश भारत और अन्य राज्यों के नेताओं से हुआ। इस अधिवेशन के बाद गणेशशंकर विद्यार्थी, विजयसिंह पथिक, जमनालाल बजाज, चांदकरण शारदा, गिरधर शर्मा, स्वामी नरसिंहदेव सरस्वती आदि के प्रयत्नों से राजपूताना मध्य भारत सभा नामक एक राजनीतिक संस्था की स्थापना दिल्ली के चांदनी चौक स्थित मारवाड़ी पुस्तकालय में हुई। बाद में कांग्रेस के नागपुर अधिवेशन (1920) के समय यह कांग्रेस की सहयोगी संस्था मान ली गई।

गणेश शंकर विद्यार्थी

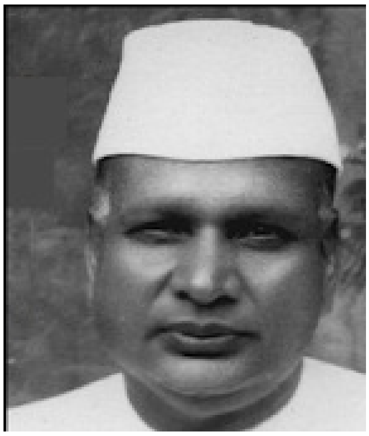

जमनालाल बजाज

राजपूताना मध्य भारत सभा का दूसरा अधिवेशन कांग्रेस अधिवेशन के साथ ही दिसम्बर 1919 में अमृतसर में सम्पन्न हुआ। मार्च 1920 में इसका तीसरा अधिवेशन जमनालाल बजाज की अध्यक्षता में अजमेर मे आयोजित किया गया। दिसम्बर 1920 में सभा का चौथा अधिवेशन नागपुर में हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन भी इस समय नागपुर में हो रहा था। सभा के अध्यक्ष नरसिंह चिंतामणि केलकर निर्वाचित हुए थे, किन्तु कुछ कारणों से वे नागपुर नहीं पहुँच पाए। अतः जयपुर के गणेशनारायण सोमाणी को सर्वसम्मति से सभापति चुना गया। अधिवेशन में एक प्रदर्शनी भी लगाई गई, जिसमें राजस्थान के कृषकों की दयनीय स्थिति दर्शायी गई थी। राजस्थानी जनता का आह्वान अब कांग्रेसी नेताओं तक पहुँचा। राजस्थान के नेताओं के दबाव के कारण कांग्रेस ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें राजस्थान के राजाओं से यह आग्रह किया गया था कि वे अपनी प्रजा को शासन में भागीदार बनाएँ।

1919 ई. में वर्धा में ही 'राजस्थान सेवा संघ' की स्थापना विजयसिंह पथिक, रामनारायण चौधरी और हरिभाई किंकर के योगदान से हुई। इस संघ का मुख्य उद्देश्य जनता की समस्याओं का निवारण करना था। इसका दूसरा ध्येय जागीरदारों और राजाओं का अपनी प्रजा के साथ सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करवाना था। इस संघ के माध्यम से राजस्थान में राजनीतिक चेतना का प्रसार हुआ। धीरे–धीरे बूंदी, जयपुर, जोधपुर, सीकर, खेतड़ी, कोटा आदि स्थानों पर संघ की शाखाएँ खोली गई। 'राजस्थान सेवा संघ' ने बिजौलिया और बेगूं में किसान आन्दोलन, सिरोही और उदयपुर में भील आन्दोलन

का मार्गदर्शन किया था। संघ ने बूंदी, सिरोही और उदयपुर में पुलिस द्वारा किए गए अत्याचारों को उजागर किया और इनकी आलोचना की। ब्रिटिश सरकार 'राजस्थान सेवा संघ' की गतिविधियों से सशंकित थी। मार्च, 1924 में रामनारायण चौधरी और शोभालाल गुप्त को 'तरुण राजस्थान' में देशद्रोहात्मक सामग्री प्रकाशित करने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया गया। न्यायालय ने रामनारायण को तो मुक्त कर दिया, परन्तु गुप्त को दो वर्षों के कठोर कारावास की सजा मिली। 1924 ई. में मेवाड़ राज्य सरकार द्वारा 'पथिक' को कैद किए जाने के बाद से सेवा–संघ के पदाधिकारियों व सदस्यों में परस्पर मतभेद शुरू हो गए। शनैः शनैः मतभेद की खाई चौड़ी होती गई। परिणामस्वरूप 1928–29 तक 'राजस्थान सेवा संघ' पूर्णतया प्रभावहीन हो गया।

सन् 1920 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का नेतृत्व महात्मा गांधी के हाथों में आ गया। उन्होंने 1921 ई. में असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया। समस्त भारत पर इसका प्रभाव पड़ा। राजस्थान भी इससे अछूता नहीं रहा। यहाँ भी लोगों में देशप्रेम की भावना जागृत हुई और राज्यों में निरंकुश शासन के प्रति तीव्र रोष उत्पन्न हुआ। जोधपुर में एक सत्याग्रही भँवरलाल सर्राफ हाथ में तिरंगा झंडा लेकर शहर में घूमे। झण्डे के एक ओर महात्मा गाँधी और दूसरी ओर 'स्वराज' लिखा था। उन्होंने बाजार में एक भाषण दिया, जिसे जनता ने उत्साह से सुना। टोंक राज्य की जनता ने एक सभा कर काँग्रेस के प्रति पूर्ण सहानुभूति व्यक्त की और असहयोग आन्दोलन का अनुमोदन किया। वहाँ के अंग्रेज पुलिस अधिकारी ने उनके नेता मौलवी अब्दुल रहीम, सैयद जुबेर मियाँ, सैयद इस्माइल मियाँ, काजी महमूद अय्यूब आदि को गिरफ्तार कर लिया। लगभग सत्तर अन्य व्यक्ति भी इस सम्बन्ध में गिरफ्तार किए गए, लेकिन शीघ्र ही छोड़ दिए गए। जयपुर राज्य में जमनालाल बजाज ने अपनी 'रायबहादुर' की उपाधि लौटा दी और एक लाख रुपये 'तिलक स्वराज कोष' में दिए। उन्होंने ग्यारह हजार रुपये मुस्लिम लीग को दिए। उन्हें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी का सदस्य बनाया गया। इसके बाद वे गाँधी जी के बहुत निकट आ गए। बजाज से प्रेरित होकर राजस्थान के दूसरे व्यापारियों ने भी इस आन्दोलन के दौरान कांग्रेस को आर्थिक सहयोग दिया।

बीकानेर में राजनीतिक जागृति अपेक्षाकृत देरी से हुई। धीरे–धीरे यहाँ भी ब्रिटिश प्रान्तों में चल रहे असहयोग आन्दोलन का प्रभाव पड़ने लगा और जनता में रियासती शासन के प्रति असन्तोष फैलना आरम्भ हो गया। सन् 1921 में बीकानेर में मुक्ताप्रसाद वकील आदि ने विदेशी कपड़ों की होली जलाई और खादी पहनने का व्रत लिया। बीकानेर में खादी भण्डार भी खोला गया। अनेक स्थानों पर जनता में जागृति लाने के उद्देश्य से पुस्तकालय और वाचनालय खोले गए। चूरू, सुजानगढ़, रतनगढ़ आदि में सर्वहितकारिणी सभा, विद्या प्रचारिणी सभा आदि नाम से समाज सेवा के उद्देश्य से संस्थाएँ स्थापित की गईं। इन संस्थाओं की ओर से राजनीतिक साहित्य के पर्चे आदि प्रसारित किए गए।

15 मार्च 1921 को अजमेर में द्वितीय राजनीतिक सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें मोतीलाल नेहरू उपस्थित थे। मौलाना शौकत अली ने सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का आह्वान किया। अजमेर में पण्डित गौरीशंकर के नेतृत्व में विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार किया गया। इस कार्य में अर्जुनलाल सेठी, चांदकरण शारदा आदि ने भी भाग लिया।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान राजस्थान के नरेशों ने तन, मन और धन से ब्रिटिश सरकार को सहायता प्रदान कर ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति पूर्ण निष्ठा का परिचय दिया था। ब्रिटिश सरकार ने भी उन्हें

अपना विश्वसनीय सहयोगी तथा युद्ध संचालन में भागीदार बनाया था। बीकानेर के महाराजा गंगासिंह को साम्राज्यिक युद्ध मंत्रिमंडल और साम्राज्यिक युद्ध सम्मेलन का सदस्य मनोनीत किया गया। उन्हें जर्मनी से संधिवार्ता में भाग लेने के लिए भारत का प्रतिनिधित्व करने हेतु पेरिस भेजा गया। विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद वायसराय की अध्यक्षता में नरेन्द्र मण्डल की स्थापना की गई, जहाँ देशी राजा अपने राज्यों और भारत सरकार से संबंधित समस्याओं पर विचार–विमर्श कर सकते थे।

इसके साथ ही ब्रिटिश सरकार द्वारा देशी राजाओं को संकेत दिया गया कि राष्ट्रवादी मध्यमवर्गीय लोग किसान, मजदूर आदि समाज की निम्न स्तर की उभरती शक्ति ब्रिटिश सरकार और देशी नरेशों के लिए समान रूप से अशान्ति और खतरा उत्पन्न करने का कारण बन सकती है। ब्रिटिश प्रशासकों ने मेवाड़ के बिजौलिया ठिकाने में किसान पंचायतों की स्थापना पर गौर किया और उनकी आत्मनिर्भरता की तुलना रूसी सोवियतों से की और बिजौलिया किसान आन्दोलन के सूत्रधार पथिक को बोलशेविक (विप्लववादी) कहा। एक बार फिर समान हितों की बात कहकर देशी राज्यों का सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया गया। देशी राज्यों का अस्तित्व ब्रिटिश सत्ता के साथ जुड़ा हुआ था। इसलिए राजस्थान के राजाओं ने असहयोग आन्दोलन को अपने अस्तित्व के लिए खतरा समझा।

राजस्थान के शासक अपने राज्यों में असहयोग आन्दोलन के दौरान होने वाली गतिविधियों के प्रति सतर्क हो गए। स्वयं को प्रगतिशील मानने वाले बीकानेर के महाराजा गंगासिंह ने अपने राज्य के शिवमूर्ति सिंह, सम्पूर्णानन्द और आनन्द वर्मा को सरकारी नौकरी से इसलिए निलंबित कर दिया क्योंकि वे स्वदेशी वस्त्र पहनते थे और उन्होंने 'तिलक स्वराज कोष' में चंदा जमा कराया था।

जोधपुर महाराजा के संरक्षक सर प्रतापसिंह इस आन्दोलन के कारण इतना बौखला उठे कि उन्होंने राज्य में विदेशी माल को प्रोत्साहन देना आरम्भ कर दिया, जबकि इससे पूर्व वे महर्षि दयानन्द के उपदेश मानकर हिन्दी भाषा और स्वदेशी का प्रचार कर रहे थे।

उदयपुर के महाराणा फतेहसिंह असहयोग आन्दोलन के प्रति गुप्त रूप से सहानुभूति रखते थे। भारत सरकार ने उन्हें आदेश दिया कि वे या तो उनके कहे अनुसार मंत्रिमंडल का गठन करें या युवराज को शासन के अधिकार सौंपकर स्वयं राजकाज से अलग हो जाएँ। महाराणा ने विवश होकर अपने युवराज भूपालसिंह को 28 जुलाई, 1921 को शासनाधिकार सौंप दिये। युवराज ने अंग्रेज सरकार की इच्छानुसार मंत्रिमंडल बनाया। राजस्व विभाग जैसा महत्वपूर्ण विभाग एक अंग्रेज अधिकारी मिस्टर ट्रैंच को सौंप दिया गया।

ब्रिटिश सरकार अब यह प्रयत्न करने लगी थी कि जहाँ तक हो सके राजस्थान के राज्यों में अंग्रेज मंत्रियों की नियुक्ति हो ताकि वे राज्यों में बढ़ती हुई राजनीतिक चेतना पर नियंत्रण रख सकें। सिरोही, बूंदी, जोधपुर और जयपुर में अंग्रेज व्यक्तियों को मंत्री नियुक्त किया गया। जहाँ ऐसा संभव नहीं हुआ, वहाँ राज्य के बाहर के व्यक्तियों को उच्च पदों पर नियुक्त करने की व्यवस्था की गई। स्थानीय प्रतिभा की पूर्ण रूप से अवहेलना की गई। मारवाड़ (जोधपुर) राज्य का प्रथम मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण व्यक्ति और स्थानीय कॉलेज का प्रथम स्नातक दरबार हाई स्कूल में क्रमशः लेखाकार और सामान्य अध्यापक के पद पर ही कार्यरत रहे। राजस्थान के अनेक राज्यों में राजाओं के प्रशासन का अधिकार छीनकर नवनियुक्त दीवानों और निरंकुश नौकरशाहों को दे दिया गया। उनका कार्य जनता की राजनीतिक गतिविधियों पर अंकुश लगाये रखना था। वे अपने कार्यों के लिए राजा या जनता के स्थान पर दिल्ली

के राजनीतिक विभाग के प्रति उत्तरदायी थे।

बीसवीं शताब्दी के तृतीय दशक तक राज्यों में बहुत बड़ी संख्या में शिक्षित लोग मौजूद थे, जिन्हें राज्य में कार्य करने का अवसर प्राप्त नहीं हो रहा था, परिणामस्वरूप उनमें असन्तोष फैल गया। इस शिक्षित वर्ग ने प्रचलित व्यवस्था में व्याप्त अनियमितताओं को उजागर कर जनता में जागृति उत्पन्न की। उन्होंने नागरिक अधिकारों और उत्तरदायी सरकार की स्थापना के लिए संघर्ष किया और जन–आन्दोलनों को नेतृत्व प्रदान किया। राजस्थान में अब एक नये युग का सूत्रपात हुआ।

राजस्थान में प्रजामण्डलों की स्थापना :

राजस्थान में स्वतंत्रता संघर्ष को तीन चरणों में विभक्त किया गया है– प्रथम 1927 ई. से पूर्व, द्वितीय 1927–1938 ई. तक तथा तृतीय 1938 से 1949 ई. तक। प्रथम चरण सामाजिक और मानवतावादी समस्याओं पर केन्द्रित था। द्वितीय चरण में 1927 ई. में ऑल इण्डिया स्टेट्स पीपुल्स कांफ्रेंस की स्थापना हुई। 1938 ई. में हरिपुरा कांग्रेस अधिवेशन में प्रस्ताव पास कर देशी रियासतों में लोगों द्वारा स्वतंत्रता संघर्ष चलाने की बात कही गई। 1938 ई. के बाद ही विभिन्न राज्यों में प्रजामण्डल या प्रजा परिषदों की स्थापना हुई तथा राजनीतिक अधिकारों और उत्तरदायी प्रशासन के लिए आन्दोलन शुरू किए गए।

प्रजामण्डल की स्थापना से पूर्व भी मुख्यतः बुद्धिजीवी वर्ग ने ब्रिटिश भारत के समान रियासतों में भी प्रजा के अनेक संगठन बनाए। ऐसे संगठनों में 1918 ई. में राजपूताना मध्य भारत सभा, 1919 ई. में राजस्थान सेवा संघ तथा 1920 ई. में अखिल भारतीय देशी लोक परिषद् की स्थापना हुई। इन संगठनों के माध्यम से स्वतंत्रता आंदोलन में तीव्रता आई।

प्रजामण्डलों की स्थापना :

सर्वप्रथम प्रजामण्डल की स्थापना 1931 ई. में जयपुर में की गई, परन्तु इसने राजनीति में प्रवेश 1938 ई. में किया। मारवाड़ में प्रजामण्डल की स्थापना 1934 ई. में हुई और कोटा में प्रजामण्डल की स्थापना 1938 ई. में हुई। इसी वर्ष उदयपुर में मेवाड़ प्रजामण्डल व अलवर में अलवर राज्य प्रजामण्डल की स्थापना की गई। 1939 ई. में भरतपुर में भी इसकी स्थापना हो गई। बूंदी ने प्रजामण्डल की स्थापना कोटा से छः वर्ष बाद 1944 ई. में की। 1945 ई. में जैसलमेर प्रजामण्डल की स्थापना की गई। 1933 ई. में सिरोही लोक परिषद् की स्थापना बम्बई (मुम्बई) में की गई और बीकानेर में लोक परिषद् की स्थापना 1936 ई. में की गई।

1. जोधपुर में जन आन्दोलन :

राजस्थान का जन आन्दोलन सर्वप्रथम जोधपुर से प्रारम्भ हुआ। जनवरी 1938 ई. में नेताजी सुभाष चन्द्र बोस जोधपुर आए और उन्होंने लोगों से त्याग और बलिदान के लिए सदैव तत्पर रहने के लिए आह्वान किया। द्वितीय महायुद्ध में जब अंग्रेजों ने देशी राज्यों से परामर्श किए ही बिना देशी राज्यों को युद्ध में धकेल दिया, तो मारवाड़ लोक परिषद् में इसके विरोध में आवाज उठाई गई। जब ब्रिटिश प्रान्तों में कांग्रेस मन्त्रिमण्डलों ने अपना रोष बताते हुए पद से त्यागपत्र दिए, तो जोधपुर के जयनारायण व्यास ने भी सलाहकार परिषद् से इस्तीफा दे दिया। इस कारण सरकार ने 29 मार्च, 1940 ई. को लोक परिषद् को गैर कानूनी संस्था घोषित कर दिया और अनेक नेताओं को जेल में डाल दिया।

छात्रों ने इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। इनमें प्रमुख थे जगदीशलाल, जोरावरमल और

मदनलाल। इन्होंने छात्रों को स्कूल जाने से रोका और उन्हें परीक्षा न देने का अनुरोध किया। 18 अगस्त, 1942 को आन्दोलन के छठे डिक्टेटर फूलचंद बाफना को गिरफ्तार कर लिया गया। नागौर के शिवदयाल दवे को भी, जिसे सातवाँ डिक्टेटर बनाया गया था, गिरफ्तार कर लिया। आठवें डिक्टेटर, तुलसीदास राठी को भी उसी दिन गिरफ्तार कर लिया गया। इस प्रकार पुलिस ने एक ही दिन लोक परिषद् के तीन डिक्टेटरों को गिरफ्तार कर लिया।

जयनारायण व्यास

मारवाड़ की स्त्रियों ने भी आन्दोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 18 अगस्त 1942 को पाँच स्त्रियों ने कुछ स्कूली छात्रों के साथ मिलकर ब्रिटिश विरोधी नारे लगाते हुए प्रभात फेरी निकाली। शीघ्र ही भीड़ इकट्ठी हो गई। घुड़सवार पुलिस को रोकने के उद्देश्य से स्त्रियाँ सड़क पर लेट गईं। क्रुद्ध जनता ने पुलिस को बुरा–भला कहा और उस पर पत्थर फेंके इनमें रमादेवी, कृष्णा कुमारी अचलेश्वर प्रसाद की पत्नी और दयावती रामचन्द्र पालीवाल की पत्नी शामिल थी। इससे पूर्व उन्होंने सर प्रताप स्कूल, पुष्टिकर स्कूल और सरदार हाई स्कूल में धरना देने का प्रयास किया। 22 सितम्बर 1942 को एक सभा में सूरजदेवी माथुर और सावित्रीदेवी माथुर ने उत्तरदायी शासन सम्बंधी गीत गाए। आर्य समाज कन्या पाठशाला की प्रधानाध्यापिका ने इस सभा में एक जोशीला भाषण दिया।

बाद में सार्वजनिक मांग पर 1944 ई. में जोधपुर राज्य व्यवस्थापिका सभा की स्थापना की गई। लेकिन राष्ट्रवादी इससे सन्तुष्ट नहीं हुए और अक्टूबर 1946 ई. को डाबरा काण्ड हुआ, जिसमें डीडवाना के जागीरदारों ने अपने सामंती सहयोगियों के द्वारा लोक परिषद् के कार्यकर्ताओं पर अमानवीय अत्याचार करवाए। यद्यपि राष्ट्रीय समाचारपत्रों में इस कृत्य की तीव्र भर्त्सना की गई, परन्तु जोधपुर महाराजा ने इसकी कोई परवाह नहीं की। जून, 1947 में जोधपुर के महाराजा उम्मेद सिंह का देहान्त हो गया और उनके पुत्र हणुवन्त सिंह को गद्दीनशीन किया गया। नये राजा ने प्रधानमंत्री वेंकटचारी को हटा दिया और अपने जागीरदारों व रिश्तेदारों का मन्त्रिमण्डल बना लिया। 28 फरवरी, 1948 को भारत सरकार ने वी.पी. मेनन को जोधपुर भेजा और उनके समझाने पर राजा ने वस्तुस्थिति को समझा। 1948 ई. में जयनारायण व्यास के मन्त्रिमण्डल का निर्माण हुआ और मार्च 1949 में जोधपुर वृहत्तर राजस्थान में विलीन हो गया।

2. बीकानेर में जन आन्दोलन :

बीकानेर के महाराजा गंगा सिंह एक प्रगतिशील शासक थे और उन्होने अपनी योग्यता से अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर ली थी। उन्होंने राज्य में व्यवस्थापिका, हाई कोर्ट व नगरपालिकाओं का निर्माण कर सुधारक की भूमिका अदा की थी। परन्तु जन आन्दोलन को उन्होंने साम, दाम, दण्ड भेद की नीति से दबा दिया था। बीकानेर में जन जागृति लाने वालों में चूरू के स्वामी गोपालदास सर्वप्रथम थे। रियासती शासन ने 'बीकानेर षड्यन्त्र केस' में स्वामी गोपाल दास व उसके आठ साथियों को फंसा दिया और जेल में अनेक यातनाएं दी। मधाराम वैद्य ने राजा के आतंक के कारण कलकत्ता जाकर बीकानेर प्रजामण्डल की स्थापना की। 1943 ई. में गंगा सिंह की मृत्यु हो गई और उनके बाद शार्दूल सिंह राजा बने। पिता की तरह पुत्र ने भी दमन चक्र चालू रखा परन्तु 1947 ई. के बाद राजा बदलते समय को पहचान गए और 1947 ई. में बीकानेर एक्ट पास कर द्विसदनीय व्यवस्थापिका–राज्यसभा तथा धारा–सभा की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त लोक सेवा आयोग व हाई कोर्ट का भी गठन किया गया। जनता को कतिपय मौलिक अधिकार भी प्रदान किए गए। अप्रैल, 1947 में बीकानेर ने केन्द्रीय संविधान सभा में प्रतिनिधि भेजे। बीकानेर ने वृहद् राजस्थान में शामिल होने में कोई अड़चन पैदा नहीं की।

लम्बे इन्तजार के बाद दिसम्बर, 1947 में बीकानेर संविधान अधिनियम जनता के लिए प्रकाशित कर दिया गया। कहने को तो इसके अनुसार शासक के संरक्षण में कार्य करते हुए, जनता के प्रति एक उत्तरदायी सरकार बनाई जा रही थी और व्यापक मताधिकार पर आधारित दो सदनों वाली व्यवस्थापिका अस्तित्व में आई। कुछ बातों को छोड़कर समस्त शासन एक परिषद् को सौंप दिया गया, जो व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी थी। शासक ने यह भी घोषणा कर दी कि दो वर्षों के भीतर ही उनके संरक्षण में एक पूर्ण उत्तरदायी सरकार बनाई जाएगी। जनवरी, 1948 में महाराजा ने सभी राजनीतिक बन्दियों को रिहा कर दिया। प्रजा परिषद् के कार्यकर्ताओं ने एक सभा में घोषणा की कि नया संविधान स्वीकार करने योग्य नहीं है। 2 फरवरी, 1948 को यह घोषणा की गई कि अप्रैल, 1948 तक उत्तरदायी सराकर अस्तित्व में आ जायेगी। 18 मार्च, 1948 को शार्दूलसिंह ने मंत्रिपरिषद् के स्थान पर एक मिला–जुला अन्तरिम मंत्रिमण्डल बनाने की घोषणा की, जिसका कार्य राज्य में दैनिक शासन को जारी रखना था। यह मिला–जुला मंत्रिमण्डल अधिक दिनों तक कार्य नहीं कर सका। प्रजामण्डल चुनाव करवाने के पक्ष में नहीं था। सामन्ती प्रतिनिधियों के साथ मिलकर जन प्रतिनिधियों के लिए सरकार चलाना सम्भव नहीं था। प्रजामण्डल के सदस्यों ने मंत्रिमण्डल से इस्तीफा दे दिया। विवश होकर महाराजा ने मंत्रिमण्डल भंग कर दिया। केन्द्र के दबाव के फलस्वरूप उसे प्रस्तावित चुनाव भी रद्द करने पड़े।

इसी बीच केबिनेट योजना के अन्तर्गत अन्तरिम सरकार बनी और संविधान निर्मात्री सभा का कार्य आरम्भ हुआ। देशी राज्यों को भी संविधान निर्मात्री सभा में भाग लेने को आमंत्रित किया गया। महाराजा शार्दूलसिंह ने दूरदर्शिता का परिचय देते हुए इसमें भाग लेने का निर्णय किया। उसने अन्य राज्यों को भी इसमें भाग लेने के लिए प्रेरित किया। 28 अप्रैल, 1947 को बीकानेर के प्रतिनिधि के.एम. पणिक्कर ने संविधान–निर्मात्री सभा में अपना स्थान ग्रहण किया। 3 जून, 1947 को माउंटबैटन योजना की घोषणा हुई, जिसमें भारत के विभाजन का उल्लेख था। देशी नरेशों के समक्ष अब यह विकल्प था कि वे स्वतंत्र रहें या भारतीय संघ या पाकिस्तान में सम्मिलित हो। महाराजा शार्दूलसिंह ने बीकानेर राज्य को भारतीय संघ में सम्मिलित करने का निर्णय किया।

3. जैसलमेर में जन आन्दोलन :

जैसलमेर एक ऐसा राज्य था जहां जन चेतना का नितान्त अभाव था। इसका मूल कारण यह था कि जैसलमेर में कम जनसंख्या थी और इसका अधिकांश भाग मरु भाग था। यातायात के साधनों का अभाव था और संचार माध्यम भी विकसित नहीं थे। यहां के राजा ने जन आकांक्षाओं को अधिक दबा रखा था। यही कारण है कि पहला समाचार पत्र 'विजय' 1920 ई. में प्रारम्भ हुआ और 1932 ई. में माहेश्वरी समाज नवयुवक मण्डल का गठन किया गया। राजा ने इस पत्र पर प्रतिबंध लगाकर इसके मंत्री को जेल में डाल दिया। सागरमल गोपा ही ऐसे पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने निरंकुश शासन के विरुद्ध जनता में जागृति पैदा की। परन्तु वे रियासती शासन के आतंक व अत्याचार के शिकार हुए। सागरमल अपनी व्यथा का वृत्तान्त निरन्तर जयनारायण व्यास, शेख अब्दुल्ला और जवाहरलाल नेहरू को भेजते रहे। सागरमल गोपा को 4 अप्रैल 1946 को जेल में ही जलाकर मार डाला। इसके बाद मीठालाल व्यास ने जैसलमेर प्रजामण्डल की स्थापना का साहस किया, परन्तु राजा के आतंक से बचने के लिए इसकी स्थापना जोधपुर में की गई। 28 मई को जयनारायण व्यास व मीठालाल ने जैसलमेर में जुलूस निकाला और एक विशाल आम सभा का आयोजन किया। इसके पश्चात् जनभावना को नहीं दबाया जा सका। अन्त में जैसलमेर भी वृहद राजस्थान में शामिल हो गया।

4. मेवाड़ में जन आन्दोलन :

मेवाड़ राज्य में जन जागृति का सूत्र पहले ही बिजौलिया सत्याग्रह और बेगूं किसान आन्दोलन के रूप में हो चुका था। अप्रैल, 1938 में माणिक्य लाल वर्मा ने 'मेवाड़ प्रजामण्डल' की स्थापना की। मेवाड़ के तत्कालीन प्रधानमंत्री धर्मनारायण ने इसे गैर कानूनी संस्था घोषित कर दिया और माणिक्य लाल वर्मा को मेवाड़ छोड़कर चले जाने का आदेश दिया। इस पर माणिक्य लाल वर्मा अजमेर चले गए और अपनी गतिविधियों का संचालन वहां रहकर करने लगे। लेकिन मेवाड़ की सरकार ने फरवरी, 1939 में माणिक्यलाल वर्मा को देवली से जबरदस्ती उठा लिया और उन्हें यातनाएं ही नहीं दी, अपितु मुकदमा चलाकर जेल में डाल दिया गया। फरवरी, 1941 में प्रजामण्डल पर से प्रतिबन्ध हटा दिया गया। नवम्बर

माणिक्यलाल वर्मा

1941 में प्रजामण्डल का प्रथम अधिवेशन माणिक्य लाल वर्मा के सभापतित्व में बड़ी धूमधाम के साथ हुआ। इस अवसर पर आचार्य जे.बी. कृपलानी तथा विजयलक्ष्मी पंडित भी आईं और खादी व ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का आयोजन भी किया गया। बाद में मेवाड़ हरिजन सेवा संघ की भी स्थापना की गई और इसका कार्य भार मोहनलाल सुखाड़िया को सौंपा गया। इसी प्रकार भील, मीणा और आदिवासियों के कल्याण का कार्य बलवन्त सिंह मेहता के सुपुर्द किया गया।

अगस्त 1942 में जब महात्मा गांधी ने भारत छोड़ो आन्दोलन चलाया, तो प्रजामण्डल को फिर गैर कानूनी संस्था घोषित कर दिया गया और इसके सम्बद्ध नेताओं को गिरफ्तार कर दिया गया। दिसम्बर 1945 में मेवाड़ प्रजामण्डल के निमंत्रण पर अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् का सातवां अधिवेशन उदयपुर में आयोजित किया गया, जिसमें 435 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन की अध्यक्षता पं. जवाहरलाल नेहरू ने की थी। धीरे–धीरे देश के वातावरण के साथ मेवाड़ में भी परिवर्तन आने लगा। महाराणा ने उत्तरदायी शासन की मांग को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए मेवाड़ को नया संविधान दिया, जिसका प्रारूप के.एम. मुन्शी ने तैयार किया था। स्वतंत्रता के बाद मेवाड़ भी राजस्थान में विलीन हो गया।

5. कोटा में जन आन्दोलन :

कोटा में जन जागृति का सूत्रपात लगभग 1918 ई. से ही प्रारम्भ हो गया था। कोटा निवासियों ने भी विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार चालू कर दिया था ओर उनमें गाँधी टोपी पहने जाने का उत्साह शुरू हो गया था। यहां पंडित नयनूराम शर्मा पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने राजकीय सेवा का त्याग कर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था। वे विजय सिंह पथिक द्वारा स्थापित राजस्थान सेवा संघ के सक्रिय सदस्य बन गए थे। उन्होंने सर्वप्रथम बेगार प्रथा के विरुद्ध कोटा में आन्दोलन चलाया और 1934 ई. में हाड़ौती प्रजामण्डल की स्थापना की। फिर इनके साथ पं. अभिन्न हरि भी हो गए और दोनों ने मिलकर सरकार से उत्तरदायी सरकार बनाने का आग्रह किया। अभिन्न हरि मांगरोल के रहने वाले थे, इसलिए उन्होंने यह 1939 ई. में कोटा राज्य प्रजामण्डल की स्थापना वहां की। इसकी अध्यक्षता पं. नयनूराम ने की। अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष सेठ मोतीलाल बनाए गए। 1940 ई. में कोटा की रामतलाई क्षेत्र में कोटा प्रजामण्डल का अधिवेशन आयोजित किया गया। इस अधिवेशन की अध्यक्षता पं. अभिन्न हरि ने की। इस सम्मेलन में विजय सिंह पथिक भी भाग लेने आए थे। कोटा प्रजामण्डल की गतिविधियों को उस समय गहरा धक्का लगा जब पं. नयनूराम की अज्ञात लोगों ने हत्या कर दी और इससे पं. अभिन्न हरि पर प्रजामण्डल का पूरा भार आ गया। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के समय पं. अभिन्न हरि ने आन्दोलन छेड़ दिया। इस आन्दोलन में इनके साथ मास्टर शंभूदयाल सक्सेना, नाथूलाल जैन, श्याम नारायण सक्सेना, सेठ मोतीलाल, वकील वेणी माधव, श्रीमती वेणी माधव इत्यादि उनके साथ थे। 1945 ई. में इस आन्दोलन में विद्यार्थी भी शामिल हो गए। उन्होंने जुलूस निकाले, और आमसभाएं आयोजित की। प्रदर्शनकारियों पर लाठीचार्ज हुआ। लेकिन भीड़ ने शहर ने शहर कोतवाली पर कब्जा कर तिरंगा झण्डा फहरा दिया। कोटा की शहरपनाह के फाटक बंद कर दिए गए। शहर में आने वाली सब सड़कों में गड्ढे खोद दिए, ताकि बाहर से कोई मदद न आ सकें। कोटा के दीवान सर हरिलाल घोसलिया और आई. जी. पुलिस संतसिंह आन्दोलन को कुचल देना चाहते थे। परन्तु कोटा के महाराव भीमसिंह ने पलायथा के सर ओंकार सिंह के माध्यम से जनता से 16 अगस्त, 1945 को समझौता कर लिया। बाद

में प्रधान मंत्री और आई.जी. पुलिस को भी दरबार ने हटा दिया। इस आन्दोलन के बाद प्रजामण्डल के झण्डे के नीचे कोटा के सामन्त, नागरिक, किसान, मजदूर और छात्र सब आ गए। जब देश आजाद हुआ, तो कोटा के महाराव भीम सिंह ने राजस्थान के विलीनीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान दिया और इसी कारण वे पूरे राजस्थान के उप राजप्रमुख बनाए गए।

6. बूंदी में जन आन्दोलन : बूंदी में भी कोटा की भांति राजनीतिक जागृति के लक्षण पहले ही से दिखाई दे रहे थे। विजय सिंह पथिक और रामनारायण चौधरी ने कर–वृद्धि और बेगार के विरुद्ध आन्दोलन प्रारम्भ किया। पुलिस ने किसानों पर अपना दमन चक्र चालू किया और नमाणा ग्राम में बहुत अत्याचार किए, जिससे आन्दोलन में और तेजी आ गई। बूंदी के महाराव ईश्वरी सिंह ने आन्दोलन को दबाने का भरसक प्रयत्न किया। 1931 ई. में कान्तिलाल की अध्यक्षता में बूंदी प्रजामण्डल की स्थापना की गई। 1936 ई. में सरकार ने राजस्थान समाचार पत्र के प्रकाशन पर पाबंदी लगा दी। लेकिन कान्तिलाल व नित्यानन्द ने इसकी परवाह नहीं करते हुए प्रशासकीय सुधारों की मांग की। 1937 ई. में प्रजामण्डल के अध्यक्ष ऋषिदत्त मेहता को तीन वर्ष के लिए राज्य से निष्कासित कर दिया। परन्तु जब वे 1941 ई. वापस बूंदी आए, तो उन्होंने फिर आन्दोलन प्रारम्भ किया। 1942 ई. में उन्होंने बृज सुन्दर शर्मा को साथ लेकर आन्दोलन छेड़ दिया। समय की मांग के अनुसार महाराव ईश्वरी सिंह में भी परिवर्तन आया और उन्होंने संविधान निर्मात्री सभा की नियुक्ति कर दी। भारत आजाद होने पर बूंदी भी वृहद राजस्थान में विलीन हो गया।

7. जयपुर में जन आन्दोलन : जयपुर में जन जागृति के कार्य का श्री गणेश अर्जुनलाल सेठी ने किया । उनके बाद जमनालाल बजाज ने 1927 में चरखा संघ की स्थापना की। 1931 ई. में कर्पूरचन्द पाटनी ने जयपुर प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रारम्भ में इसका कार्य समाज सुधार ही रहा। बाद में पं. हीरालाल शास्त्री, चिरंजीलाल अग्रवाल, कपूरचन्द पाटनी व दौलत मल भण्डारी को भी गिरफ्तार कर लिया गया। इसके विरोध में जयपुर शहर में इस दमन चक्र की भर्त्सना की गई। आखिर सरकार प्रजामण्डल के नेताओं से बातचीत करने के लिए तैयार हो गई। अगस्त, 1939 ई. को दोनों पक्षों में समझौता हो गया जिसके फलस्वरूप प्रजामण्डल को मान्यता मिल गई और सेठ जमनालाल बजाज व अन्य कार्यकर्ता रिहा कर दिए गए।

हीरालाल शास्त्री

1940 ई. में पं. हीरालाल शास्त्री प्रजामण्डल के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। उन्होंने राज्य भर में प्रजामण्डल की शाखाएं खोल दी। 1941 ई. (नवम्बर) में प्रजामण्डल का तीसरा अधिवेशन हुआ। 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के समय जयपुर में आन्दोलन छेड़ा गया, तो जयपुर महाराज ने उत्तरदायी सरकार की मांग को स्वीकार कर लिया। अब जयपुर में आन्दोलन का काई औचित्य ही नहीं रहा। इस समय प्रजामण्डल में दो वर्ग हो गए थे। एक वर्ग अपने आप को अखिल भारतीय आन्दोलन के साथ रखना चाहता था और दूसरा, जिसका नेतृत्व शास्त्री जी कर रहे थे, आन्दोलन के पक्ष में नहीं था परन्तु बाबा हरिशचन्द्र के गुट के दबाव में सितम्बर, 1942 को हीरालाल शास्त्री ने प्रधानमंत्री सर मिर्जा इस्माइल को आन्दोलन छेड़ने का अल्टीमेटम दे दिया। इस पर प्रधानमंत्री ने शास्त्रीजी को वार्तालाप के लिए आमंत्रित किया। दोनों में बातचीत के बाद निम्न समझौता हो गया :–

(1) युद्ध के लिए राज्य सरकार जन–धन की सहायता नही देगी।

(2) प्रजामण्डल को राज्य में शांतिपूर्वक युद्ध–विरोधी अभियान चलाने की स्वतन्त्रता होगी।

(3) ब्रिटिश प्रान्तों से आने वाले किसी आन्दोलनकारी को प्रवेश करने में नहीं रोका जाएगा।

(4) जनता को उत्तरदायी शासन देने के लिए राज्य शीघ्रातिशीघ्र कार्रवाई करेगा।

(5) प्रजा मण्डल महाराजा के विरुद्ध किसी प्रकार की सीधी कार्रवाई नहीं करेगा।

इस समझौते के फलस्वरूप जनसाधारण में आन्दोलन करने की प्रेरणा समाप्त प्रायः हो गई। शास्त्री समझौते के बावजूद आजाद मोर्चे के नेताओं ने आन्दोलन चलाया, परन्तु गिरफ्तार कर लिए गए। 1945 ई. में जब जवाहरलाल नेहरू जयपुर आए, तो आजाद मोर्चे का प्रजामण्डल में विलीनीकरण हो गया। अक्टूबर, 1942 में महाराजा ने एक समिति का गठन किया, जिसका कार्य संवैधानिक सुधारों का सुझाव देना था। इस समिति ने दो वर्ष में प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसके फलस्वरूप 1945 ई. में दो सदनों वाली व्यवस्थापिका स्थापित की गई, परन्तु दोनों में महाराजा का ही वर्चस्व था। जब चुनाव हुए तो प्रजामण्डल ने चुनाव में भाग लिया जिसमें परिषद में तीन सीटों पर और प्रतिनिधि सभा में 27 सीटों पर विजय प्राप्त की। 24 जुलाई, 1947 के दिन जब नरेन्द्र मण्डल की सभा हुई तो जयपुर नरेश ने यह घोषणा कर दी कि वे भारतीय संघ में सम्मिलित होंगे। लेकिन जब उत्तरदायी सरकार का निर्माण किया गया, तो उसमें प्रजामण्डल का केवल एक सदस्य ही लिया गया। जनता के दबाव पर मंत्रिमण्डल का विस्तार किया गया जिसमें हीरालाल शास्त्री को मुख्यमंत्री बनाया गया और देवीशंकर तिवाड़ी, दौलतमल भण्डारी और टीकाराम पालीवाल को मंत्री बनाया गया। 30 मार्च, 1949 को जयपुर का राजस्थान संघ में विलीनीकरण हो गया और उत्तरदायी सरकार की स्थापना की गई। महाराजा मानसिंह को राजस्थान का राजप्रमुख बनाया गया, महाराणा उदयपुर को महा राजप्रमुख और कोटा महाराव को उप राजप्रमुख बनाया गया।

8. अलवर में जन आन्दोलन : अलवर राज्य की जनता में जागृति लाने का कार्य पं. हरिनारायण शर्मा ने किया। उन्होंने अस्पृश्यता निवारण संघ, वाल्मीकी संघ तथा आदिवासी संघ की स्थापना की, खादी का प्रचार किया और आम जनता में जागृति पैदा करने का प्रयास किया। जब मार्च, 1933 में ब्रिटिश सरकार ने अलवर के महाराजा जयसिंह को गद्दी से उतार कर अपने मनोनीत एक जागीरदार के पुत्र तेज सिंह को गद्दी पर बिठा दिया, तो इसके विरोध में जनता ने एक आम सभा

आयोजित की। राज्य सरकार ने हरिनारायण शर्मा, कुंज बिहारी लाल मोदी और अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। 1938 ई. में अलवर राज्य प्रजामण्डल की स्थापना हुई। अन्य प्रजामण्डलों की भांति अलवर प्रजामण्डल ने भी उत्तरदायी सरकार की मांग की और आन्दोलन चालू किया। 1940 ई. में राज्य द्वारा युद्ध कोष के लिए धन एकत्रित करने का प्रजामण्डल ने विरोध किया। इस पर हरिनारायण शर्मा और उनके सहयोगी मास्टर भोलानाथ को गिरफ्तार कर लिया गया। आम जनता ने इसका विरोध किया। भारत छोड़ो आन्दोलन में भी प्रजा मण्डल ने आन्दोलन किया। जनवरी, 1944 ई. में भवानी शंकर शर्मा की अध्यक्षता में प्रजा मण्डल का पहला अधिवेशन हुआ, जिसमें उत्तरदायी सरकार की मांग को दोहराया गया। फरवरी, 1946 में उत्तरदायी सरकार बनाने के लिए प्रजा मण्डल ने आन्दोलन छेड़ दिया और कई गिरफ्तारियां दी। इसके पश्चात् जून, 1946 ई. में प्रजामण्डल ने किसानों के समर्थन से आन्दोलन किया। प्रजामण्डल और सरकार में टकराव 1947 ई. में भी चलता रहा। अलवर में साम्प्रदायिक दंगे हुए। इसके लिए अलवर के दीवान एन.बी. खरे को उत्तरदायी ठहराया और सरकार को यह संदेह था कि महात्मा गांधी की हत्या में खरे की मिलीभगत थी। अतः खरे को दिल्ली में रहने के आदेश दिए गए। मार्च, 1948 में अलवर राज्य का मत्स्य संघ में विलय हो गया।

9. भरतपुर में जन आन्दोलन : भरतपुर राज्य में जन जागृति उत्पन्न करने वालों में जगन्नाथ दास अधिकारी और गंगाप्रसाद शास्त्री का नाम प्रमुख है। भरतपुर के तत्कालीन राजा महाराजा किशन सिंह (1900–1927) एक प्रगतिशील व्यक्ति थे। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया और गाँवों व नगरों में स्वायत्तशासी संस्थाओं को विकसित किया। वे उत्तरदायी सरकार बनाने के भी पक्षधर थे। उनके प्रगतिशील विचारों की उन्हें कीमत चुकानी पड़ी और ब्रिटिश सरकार ने उनको गद्दी से उतार दिया और बालक ब्रिजेन्द्र सिंह को गद्दी पर बिठा दिया तथा शासन चलाने के लिए एक प्रशासक नियुक्त कर दिया। 1930 में भरतपुर महाविद्यालय के छात्रों ने स्वतंत्रता दिवस मनाया।

1938 ई. में राज्य के बाहर रेवाड़ी में भरतपुर प्रजामण्डल की स्थापना की गई। इसके अध्यक्ष गोपीलाल यादव बने और कोषाध्यक्ष मास्टर आदित्येन्द्र को बनाया गया। राज्य सरकार ने प्रजामण्डल को गैर कानूनी संस्था घोषित कर दिया। इस पर प्रजामण्डल ने 21 अप्रैल, 1938 ई. को सरकार के विरुद्ध सत्याग्रह प्रारम्भ कर दिया। अन्त में 23 दिसम्बर, 1940 ई. को प्रजा परिषद् को मान्यता दे दी गई और सब नेता जेल से छोड़ दिए गए। 30 दिसम्बर, 1940 ई. को परिषद् का पहला सम्मेलन जयनारायण व्यास की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। इसमें उत्तरदायी शासन की मांग प्रस्तुत की गई। सरकार ने 22 अक्टूबर, 1942 में ब्रज जन प्रतिनिधि समिति के गठन की घोषणा की। इसके लिए अगस्त, 1943 में चुनाव करवाए गए। इसमें 50 सदस्य थे, जिनमें 37 निर्वाचित थे। प्रजा परिषद् ने इसमें से 27 पद जीत लिए। युगल किशोर चतुर्वेदी को इसका नेता बनाया गया और मास्टर आदित्येन्द्र को उपनेता। लेकिन परिषद् के ढकोसले का शीघ्र ही पता लग गया और परिषद् के सदस्यों ने इसका बहिष्कार करना चालू कर दिया।

प्रजा परिषद् का दूसरा अधिवेशन 23 मई, 1945 ई. को बयाना में आयोजित किया गया और फिर उत्तरदायी शासन की मांग रखी गई। प्रजा मण्डल ने सत्याग्रह चालू कर दिया। राज्य सरकार ने सब नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। 14 जनवरी, 1947 ई. को वायसराय वेवेल व बीकानेर के महाराजा शार्दूल सिंह भरतपुर आए। उनके पहुंचने पर जनता ने व्यापक प्रदर्शन कर अपना आक्रोश प्रदर्शित किया। सरकार ने भी अपना दमन चक्र चलाया और सारे नेता जेल में डाल दिए गए। अलवर के मेवों व जाटों

में दंगे भड़क उठे। 15 अगस्त, 1947 को जब भारत आजाद हुआ, तो भरतपुर साम्प्रदायिकता की आग में जल रहा था। 18 मार्च, 1948 को भरतपुर राज्य को मत्स्य संघ में विलीन कर दिया गया।

10. धौलपुर में जन आन्दोलन : धौलपुर में जन चेतना का कार्य स्वामी श्रद्धानन्द ने 1918 ई. में ही प्रारम्भ कर दिया था। 1936 में पं. कृष्ण दत्त पालीवाल ने धौलपुर प्रजामण्डल की स्थापना की। इसके पश्चात् 1938 ई. व 1940 ई. में उत्तरदायी शासन की मांग प्रस्तुत की। 12 नवम्बर, 1946 को तासीम गांव में प्रजा मण्डल का अधिवेशन बुलाया गया, परन्तु सरकार ने किराये के गुण्डों के माध्यम से दंगे फसाद करवा दिए। 1947 ई. के बाद भी धौलपुर प्रजामण्डल उत्तरदायी शासन की मांग करता रहा। अन्त में 17 फरवरी, 1948 को सरदार पटेल ने महाराजा को दिल्ली बुलाकर शासनाधिकार त्यागने पर मजबूर कर दिया। बाद में धौलपुर को मत्स्य संघ में विलीन कर दिया गया।

11. करौली में जन आन्दोलन : करौली में प्रजामण्डल की स्थापना 1938 ई. में हुई। इसके प्रमुख नेता त्रिलोक चन्द माथुर, चिरंजी लाल शर्मा व मान सिंह आदि थे। अन्य राज्यों की भांति करौली में भी आन्दोलन समाप्त करने के प्रयास किए गए। नवम्बर 1946 में करौली के पड़ौसी राज्य के कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन बुलाया गया, जिसमें करौली में उत्तरदायी शासन की मांग की गई। जुलाई, 1947 में महाराजा ने 11 सदस्यों की एक समिति संवैधानिक सुधार के विषय में सुझाव देने के लिए नियुक्त की। प्रजामण्डल ने मांग की कि इसमें कुछ जन प्रतिनिधि भी होने चाहिए, परन्तु महाराजा ने यह मांग अस्वीकार कर दी। कुछ समय बाद करौली का मत्स्य संघ में विलीनीकरण हो गया।

12. अन्य राज्यों में जन आन्दोलन : राजस्थान में अनेक राज्य ऐसे थे, जहाँ राजनीतिक चेतना का विकास बीसवीं सदी के दूसरे व तीसरे दशक में हुआ। उनमें थे, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़, सिरोही, शाहपुरा, टोंक, कुशलगढ़। झालावाड़ राज्य ऐसा राज्य था, जहां के राजा स्वयं प्रगतिवादी थे और उन्होने अनेक कदम ऐसे उठाये जिससे जन चेतना में वृद्धि हुई। बांसवाड़ा में भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी, डूंगरपुर में भोगीलाल पंड्या, हरिदेव जोशी , गौरीशंकर आचार्य, शिवलाल कोटडिया, भीखाभाई भील; प्रतापगढ़ में अमृतलाल पायक, चुन्नीलाल प्रभाकर; सिरोही में गोकुल भाई भट्ट आदि ने जन चेतना लाने में अथक प्रयास किए और प्रजामण्डलों की स्थापना की। डूंगरपुर के भोगीलाल पंड्या ने भीलों, चमारों, और अन्य पिछड़ी जातियों में शिक्षा द्वारा जन जागृति लाने का प्रयास किया। सेवा संघ के माध्यम से सामाजिक कुरीतियां तथा अन्धविश्वासों को दूर किया। उन्हीं के प्रयासों से 1945 में डूंगरपुर प्रजामण्डल की स्थापना हुई थी। बांसवाड़ा में भील बाहुल्य इलाके में भूपेन्द्र नाथ त्रिवेदी ने जन जागृति पैदा की। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सभी राज्यों का वृहद् राजस्थान में विलय हो गया।

प्रजामण्डलों का मूल्यांकन :

राजस्थान में प्रजामण्डलों या लोक परिषदों का जन जागृति करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने अपनी राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं के प्रति जनता में चेतना उत्पन्न की। प्रारम्भिक अवस्था में यद्यपि इतनी सफलता नहीं मिली, फिर भी कार्यकर्ताओं और नेताओं के प्रयास कम नहीं हुए। राजाओं ने पहले तो प्रजामण्डलों को गैर–कानूनी बताया और नेताओं को जेल में डाल दिया। इससे जनता में और जागृति पैदा हुई। 1921 में राजाओं और नवाबों का केन्द्रीय स्तर पर नरेन्द्र मण्डल बनाया गया। इस संस्था के सुझाव पर राजाओं ने प्रजामण्डलों व लोक परिषदों की स्थापना होने दी। प्रजामण्डलों ने कांग्रेस के कार्यक्रमों को भी अपनाया और आन्दोलनों में भाग लिया। इसमें 1942 का भारत छोड़ो

आन्दोलन सबसे प्रमुख है। इससे सारा देश एकता के सूत्र में बंध गया और राजाओं को भी आभास हो गया कि अब लोकतन्त्र का युग आ रहा है और राजतन्त्र व निरंकुशता के दिन चले गए हैं। यही कारण है कि सरदार पटेल के प्रयासों से सभी राजाओं ने अपने राज्यों का भारत संघ में विलीनीकरण स्वीकार कर लिया। प्रजामण्डलों ने ही सामाजिक कुरीतियों की ओर जनता का ध्यान आकृष्ट किया। इस महान् सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तन लाने का श्रेय प्रजामण्डलों को ही जाता है।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. 1888 ई. में कांग्रेस के इलाहाबाद अधिवशन में राजस्थान से किन प्रतिनिधियों ने भाग लिया?
2. 1919 ई. में राजस्थान सेवा संघ की स्थापना कहां हुई?
3. अखिल भारतीय देशी लोक परिषद की स्थापना कब हुई?
4. किसके प्रयासों से 1945 ई. में डूंगरपूर प्रजामंडल की स्थापना हुई?
5. अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र 'राजस्थान टाइम्स' का प्रकाशन कहां से आरम्भ हुआ?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. 1857 ई. के प्रथम स्वाधीनता संग्राम का राजस्थान में क्या सकारात्मक प्रभाव परिलक्षित हुए?
2. 'राजस्थान सेवा संघ' के मुख्य उद्देश्य क्या थे? राजस्थान में जनजागृति में राजस्थान सेवा संघ की भूमिका को समझाइए।
3. राजस्थान की जनजागृति में महात्मा गांधी के आंदोलनों का क्या प्रभाव पडा?

निबंधात्मक प्रश्न :

1. स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान राजस्थान में प्रजामंडलों की भूमिका का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. राजस्थान में जनजागृति में कांग्रेस की भूमिका का वर्णन कीजिए।

अध्याय

6

राजस्थान का एकीकरण

1946 ई. में जब यह स्पष्ट प्रतीत होने लग गया था कि भारत की स्वतंत्रता अब ज्यादा दूर नहीं है, तो इसका असर राजस्थान की रियासतों पर भी स्पष्ट दिखाई देने लगा। इस समय राजस्थान में 19 रियासतें, 3 ठिकाने व एक केन्द्र शासित प्रदेश अजमेर–मेरवाड़ा था। इस अध्याय में हम उन घटनाओं के बारे में जानेंगे, जो अंततः इन विभिन्न रियासतों में बंटे राजस्थान को एक एकीकृत राजस्थान के रूप में बदल देती है।

सर्वप्रथम मेवाड़ के महाराणा भूपालसिंह ने तारीख 25 और 26 जून, 1946 ई. को राजस्थान यूनियन बनाने के उद्देश्य से राजस्थान, गुजरात और मालवा के राजाओं का एक सम्मेलन उदयपुर में बुलाया। इस सम्मेलन में 22 राजा–महाराजा उपस्थित थे। इसमें महाराणा ने एक 'राजस्थान संघ' के निर्माण की योजना प्रस्तुत की। राजाओं ने महाराणा की योजना पर विचार करने का वादा किया।

महाराणा को अपने प्रस्तावों को अमली जामा पहनाने की धुन बनी रही। उन्होंने सुप्रसिद्ध संविधानवेत्ता के.एम. मुंशी को अपना संवैधानिक सलाहकार नियुक्त किया। मुंशी की सलाह पर महाराणा ने उक्त राजाओं का एक और सम्मेलन तारीख 23 मई, 1947 ई. को उदयपुर में आमन्त्रित किया। महाराणा ने सम्मेलन में राजाओं को चेतावनी दी कि ''हम लोगों ने मिलकर अपनी रियासतों की यूनियन नहीं बनाई तो सभी रियासतें जो प्रान्तों के समकक्ष नहीं हैं, निश्चित रूप से समाप्त हो जाएंगी।'' मुंशी ने भी इस सम्मेलन में महाराणा की योजना का जोरदार समर्थन किया, किंतु अंतिम रूप से कोई लाभकारी परिणाम सामने नहीं आया।

जयपुर के महाराजा मानसिंह की स्वीकृति से वहाँ के दीवान सर वी.टी. कृष्णामाचारी ने भी प्रदेश के शासकों और उनके प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाया। इस सम्मेलन में उन्होंने प्रस्ताव रखा कि प्रदेश की रियासतों का एक ऐसा संघ बनाया जाए, जिसमें हाईकोर्ट, उच्च शिक्षा, पुलिस आदि विषय संघ को सौंप दिए जाएं और शेष विषय इकाइयों के पास रहें। उन्होंने सम्मेलन को यह भी कहा कि यदि उन्हें यह प्रस्ताव स्वीकार न हो तो समस्या का दूसरा हल यह है कि प्रदेश की जो रियासतें अपना पृथक अस्तित्व रखने की क्षमता नहीं रखतीं, वे पड़ोस की बड़ी रियासतों में मिल जाएं, परंतु सम्मेलन बिना किसी निर्णय पर पहुँचे ही समाप्त हो गया।

मत्स्य संघ का निर्माण :

देश के विभाजन के समय भारतीय उपमहाद्वीप में भीषण साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे। अलवर

और भरतपुर की रियासतें भी इन दंगों से नहीं बच सकीं। भारत सरकार को इस प्रकार की शिकायतें मिलीं कि अलवर में दंगे भड़काने में स्वयं अलवर प्रशासन का हाथ है। भारत सरकार ने 7 फरवरी को महाराजा अलवर और डॉ. खरे को दिल्ली में नजरबन्द कर दिया और अलवर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया।

भरतपुर में साम्प्रदायिक दंगों से उत्पन्न स्थिति से भारत सरकार इस निर्णय पर पहुंची कि वहाँ का प्रशासन राज्य में कानून और व्यवस्था बनाए रखने में सर्वथा निकम्मा साबित हुआ है। इसके पहले कि भारत सरकार इस सम्बन्ध में कोई कदम उठाती, स्वयं वहाँ के महाराजा ने भरतपुर का प्रशासन भारत सरकार को सौंप दिया।

मत्स्य संघ

अलवर और भरतपुर से मिली हुई धौलपुर और करौली की छोटी–छोटी रियासतें थीं। ये चारों रियासतें भारत सरकार द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार पृथक् अस्तित्व बनाये रखने योग्य नहीं थीं। अतः इन चारों ने मिलकर मत्स्य संघ बना लिया। इस नए राज्य का उद्घाटन भारत सरकार के मंत्री एन. बी. गाडगिल ने 17 मार्च, 1948 को किया। संघ के राजप्रमुख महाराजा धौलपुर और उप राजप्रमुख महाराजा करौली बनाए गए। अलवर प्रजामण्डल के प्रमुख नेता शोभाराम कुमावत मत्स्य संघ के प्रधानमंत्री बने।

राजस्थान संघ का निर्माण :

रियासती विभाग ने तारीख 3 मार्च, 1948 ई. को कोटा, बून्दी, झालावाड़, टोंक, डूंगरपुर, बाँसवाड़ा, प्रतापगढ़, किशनगढ़ और शाहपुरा की रियासतों को मिलाकर 'राजस्थान संघ' नामक राज्य के निर्माण का प्रस्ताव दिया। राजस्थान संघ में शामिल होने वाली रियासतें चाहती थीं कि मेवाड़ भी इस प्रस्तावित संघ का हिस्सा बने, पर मेवाड़ महाराणा सहमत न थे। यद्यपि मेवाड़ प्रजामण्डल ने महाराणा के इस निर्णय का विरोध किया, परन्तु अंतिम परिणाम इस संघ को मेवाड़ के न शामिल होने के रूप में ही आया। आखिरकार बिना मेवाड़ के ही यह संघ अस्तित्व में आया।

प्रस्तावित राज्य में शामिल होने वाली सभी रियासतों के शासकों ने कोवीनेन्ट (विलय पत्र) पर हस्ताक्षर कर दिए। बाँसवाड़ा के महारावल चन्द्रवीरसिंह ने विलय–पत्र पर हस्ताक्षर करने में थोड़ी हिचकिचाहट बताई। अन्त में पड़ोसी रियासतों की सलाह पर उन्होंने भी विलय–पत्र पर यह कहकर हस्ताक्षर कर दिए कि, ''मैं अपने 'डेथ वारन्ट' पर हस्ताक्षर कर रहा हूँ।''

मेवाड़ का राजस्थान संघ में विलय :

5 अप्रैल को मेवाड़ में हुए गोलीकाण्ड ने महाराणा को बचाव की स्थिति में ला दिया। प्रजामण्डल ने राज्य में अविलम्ब, पूर्ण उत्तरदायी सरकार की स्थापना और गोलीकाण्ड की जाँच के लिए न्यायिक आयोग नियुक्त करने की माँग की। दिल्ली में उस समय काँग्रेस की हुकूमत थी। महाराणा को 'राजस्थान संघ' में विलय ही प्रजामंडल से बचाव का उपाय सूझा। उन्होंने सर राममूर्ति, डॉ. मोहनसिंह मेहता और अन्य सलाहकारों को मेवाड़ के विलय की शर्ते अविलम्ब तय करने के लिये दिल्ली भेजा। रियासती विभाग तो इस प्रकार के सुनहरी अवसर के इन्तजार में था ही।

रियासती विभाग ने यह नीति बना ली थी कि किसी भी रियासत के शासक को 10 लाख रुपये वार्षिक से अधिक प्रिवीपर्स नहीं दिया जाएगा। महाराणा की ओर से 20 लाख रु वार्षिक प्रिवीपर्स की माँग की गई। रियासती विभाग ने रास्ता ढूँढ़ निकाला। उसने महाराणा को 10 लाख रुपये वार्षिक प्रिवीपर्स, 5 लाख वार्षिक राजप्रमुख के पद का भत्ता और शेष 5 लाख रुपये वार्षिक मेवाड़ के राजवंश की परम्परा के अनुसार धार्मिक कृत्यों में खर्च के लिए देना स्वीकार कर लिया। उसने महाराणा को संयुक्त राजस्थान का आजन्म राजप्रमुख बनाना भी स्वीकार कर लिया। उस समय तक इतनी रियायतें विलय होने वाली किसी अन्य रियासत के शासक को नहीं दी गई थी।

मेवाड़ का प्रतिनिधि–मण्डल रियासती विभाग से मनचाही शर्तें मंजूर करवा कर दिल्ली से उदयपुर लौटा तो महाराणा ने राहत की साँस ली।

कोटा में राजस्थान संघ राज्य का 25 मार्च को उद्घाटन होने वाला था, पर मेवाड़ के विलय के निश्चय की सूचना रियासती विभाग को 23 मार्च को मिल गई थी। अतः वी.पी. मेनन ने महाराव कोटा को सलाह दी कि मेवाड़ के विलय के सम्बन्ध में निर्णय होने तक नए राज्य का उद्घाटन समारोह रोक दिया जाए। महाराव कोटा ने उत्तर दिया कि समारोह की सारी तैयारियाँ हो चुकी हैं एवं कई राजा, महाराजा एवं अन्य अतिथियों को निमंत्रण भेजे जा चुके हैं, अतः समारोह निर्धारित तारीख को सम्पन्न करना होगा। रियासती विभाग ने महाराव कोटा का तर्क मान लिया। 25 मार्च को भारत सरकार के मंत्री एन.वी. गाडगिल ने कोटा में नये राज्य के उद्घाटन की रस्म अदा की। उन्होंने महाराव कोटा को राजप्रमुख एवं गोकुललाल असावा को प्रधानमंत्री के पद की शपथ दिलवाई।

मेवाड़ महाराणा द्वारा विलय पत्र पर हस्ताक्षर करने के तुरन्त बाद रियासती विभाग ने राज्य के प्रधानमंत्री पद के लिये मेवाड़ के तपस्वी नेता माणिक्यलाल वर्मा को मनोनीत किया। वर्मा ने उदयपुर लौटते ही संयुक्त राजस्थान के राजप्रमुख महाराणा भूपालसिंह से मंत्रिमण्डल निर्माण सम्बन्धी चर्चा की। महाराणा ने वर्मा को मन्त्रिमण्डल में जागीरदारों को प्रतिनिधित्व देने का आग्रह किया। वर्मा ने राजप्रमुख का सुझाव मानने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। नए राज्य के बनते ही वैधानिक संकट पैदा हो गया। 18 अप्रैल, 1948 को पं. नेहरू संयुक्त राज्य राजस्थान का उद्घाटन करने हेतु उदयपुर पहुंचे।

पंडित नेहरू ने वर्मा को सलाह दी कि वे अपने पद की शपथ ले लें ओर मन्त्रिमण्डल बनाने में कोई कठिनाई पैदा हो तो वे और सर राममूर्ति दिल्ली जाकर रियासती विभाग से सलाह कर लें। पं. नेहरू की सलाह पर राजप्रमुख के साथ ही साथ वर्माजी ने भी प्रधानमंत्री पद की शपथ ली। इसके पश्चात् वर्मा ने अपनी इच्छानुसार मंत्रिमंडल का गठन किया।

संयुक्त राज्य राजस्थान का मंत्रिमण्डल केवल 11 माह रहा। इस अल्प–अवधि में उसने वह कर दिखाया जो किसी प्रान्त या राज्य की सरकार 11 वर्षों में भी नहीं कर पाई। इस आश्चर्यजनक सफलता का श्रेय वर्मा के नेतृत्व और उनके तपे–तपाये सहयोगियों को जाता है, जिन्होंने परिश्रम, लगन और दृढ़ निश्चय के साथ राजस्थान की सदियों से शोषित जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाया।

वृहत् राजस्थान का निर्माण :

अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा 20 जनवरी, 1948 ई. को एक प्रस्ताव द्वारा राजस्थान की सभी रियासतों को मिलाकर वृहत् राजस्थान राज्य के निर्माण की माँग कर चुकी थी। परन्तु भारत सरकार के सामने उक्त प्रस्ताव को क्रियान्वित करने में कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ थी। प्रदेश में जोधपुर, जयपुर और बीकानेर, जैसी रियासतें थी, जो भारत सरकार द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार अपना पृथक् अस्तित्व रख सकती थी।

किंतु जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर राज्यों की सीमाएँ पाकिस्तान से मिली हुई थी, जहाँ से सदैव आक्रमण का भय बना रहता था। ये रियासतें थार के विशाल रेगिस्तान का अंग थी, जिसका विकास करना उक्त राज्यों की आर्थिक सामर्थ्य के बाहर था। अतः रियासती विभाग इन रियासतों को वृहत् राजस्थान में शामिल करना चाहता था।

दिसम्बर, 1948 ई. के प्रथम सप्ताह में सरदार पटेल की सहमति से वी.पी. मेनन ने जोधपुर, बीकानेर और जयपुर के राजाओं से वृहत् राजस्थान के निर्माण के लिए विचार–विनिमय शुरू किया। तीनों शासक अपनी–अपनी रियासतों को पृथक् इकाइयों के रूप में रखने के इच्छुक थे।

अन्ततोगत्वा कई बैठकों के बाद मेनन उक्त राजाओं को विलय के लिए मनाने में सफल हो गए। जैसलमेर का शासन–प्रबंध पहले ही भारत सरकार के हाथ में था। 14 जनवरी, 1949 ई. को सरदार पटेल ने उदयपुर में एक विशाल सार्वजनिक सभा में घोषणा की कि जोधपुर, जयपुर और बीकानेर के महाराजाओं ने अपनी–अपनी रियासतों का राजस्थान में विलय करना स्वीकार कर लिया है। सरदार पटेल की इस ऐतिहासिक घोषणा का उपस्थित जनसमुदाय ने करतल ध्वनि से स्वागत किया। इसके पश्चात् इस योजना पर विचार करने हेतु 3 फरवरी, 1949 को दिल्ली में वी.पी. मेनन ने एक बैठक का आयोजन किया।

इस बैठक में निर्णय लिया गया कि जयपुर के महाराजा सवाई मानसिंह को जीवन–पर्यन्त राजप्रमुख बनाया जाए एवं उदयपुर के प्राचीन राजवंश की मान–मर्यादा को ध्यान में रखते हुए महाराणा भूपालसिंह को महाराज प्रमुख का सम्मानीय पद दिया जाए। वर्मा इस बैठक में सम्मिलित नहीं हो पाए, पर अगले दिन उन्होंने निर्णय पर हस्ताक्षर कर दिए।

इस बैठक में राजधानी का मसला सरदार वल्लभभाई पटेल पर छोड़ दिया गया। सरदार पटेल ने राजधानी के चुनाव के लिए विशेषज्ञों की एक समिति (पी. सत्यनारायण राव समिति) नियुक्त की। इस

समिति ने जयपुर को राजस्थान की राजधानी बनाने की सिफारिश की। समिति ने राजस्थान के अन्य बड़े नगरों का महत्व बनाए रखने के लिए कुछ राज्य–स्तर के सरकारी कार्यालय उक्त नगरों में रखने की सलाह दी। सरदार पटेल ने समिति की सिफारिश स्वीकार कर ली। फलस्वरूप जयपुर को राजस्थान की राजधानी घोषित कर दिया गया। हाईकोर्ट जोधपुर में, शिक्षा विभाग बीकानेर में, खनिज और कस्टम एवं एक्साइज विभाग उदयपुर में, वन और सहकारी विभाग कोटा में एवं कृषि विभाग भरतपुर में रखने का निर्णय लिया गया। 30 मार्च, 1949 को सरदार पटेल द्वारा वृहत् राजस्थान का विधिवत उद्घाटन किया गया। 30 मार्च को राजस्थान दिवस के रूप में मनाए जाने का निर्णय भी लिया गया। हीरालाल शास्त्री को इस वृहत् राजस्थान का प्रधानमंत्री बनाया गया।

राजस्थान की विभिन्न रियासतों के विलय के साथ ही साथ राजस्थान में सदियों पुरानी राजाशाही समाप्त हो गई। मेवाड़ के गुहिल (सिसोदिया),जैसलमेर के भाटी, जयपुर के कछवाहा और बूंदी के हाड़ा चौहान संसार के प्राचीनतम राजवंश में से थे। राजाशाही के अन्तिम चिह्न के रूप में अब केवल राजप्रमुख के नवसृजित पद रह गए। ये पद संयुक्त राजस्थान और मत्स्य संघ में प्रान्तों के राज्यपालों (गवर्नर) के समकक्ष थे। यह एक ऐसी रक्तहीन क्रान्ति थी, जिसका उदाहरण संसार के इतिहास में ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा।

मत्स्य संघ का विलय :

अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली की रियासतों के एकीकरण द्वारा 18 मार्च, 1948 ई. को मत्स्य संघ बनाया गया था। अब जबकि जयपुर, जोधपुर और बीकानेर की रियासतें राजस्थान में मिल

चरण	नाम	रियासतें, जो शामिल हुई	तारीख
प्रथम	मत्स्य संघ	अलवर, भरतपुर, धौलपुर, करौली	18–03–1948
द्वितीय	राजस्थान संघ	बांसवाड़ा, बूंदी, डूंगरपुर, झालावाड़ किशनगढ़, कोटा, प्रतापगढ़, शाहपुरा, टोंक	25–03–1948
तृतीय	संयुक्त राज्य राजस्थान	उदयपुर राजस्थान संघ से जुड़ा	18–04–1948
चतुर्थ	वृहत् राजस्थान	बीकानेर, जयपुर, जैसलमेर और जोधपुर सं.रा. राजस्थान से जुड़ीं	30–03–1949
पंचम	संयुक्त राज्य वृहत् राजस्थान	वृहत् राजस्थान से मत्स्य संघ जुड़ा	15–05–1949
षष्ठ	संयुक्त राजस्थान	सं.रा. वृहत् राजस्थान में सिरोही का विलय	26–01–1950
सप्तम	पुनगर्ठित राजस्थान	'ग' श्रेणी का अजमेर राज्य, आबूरोड तालुका, सिरोही रियासत का पूर्व में बम्बई राज्य में मिला हिस्सा, मध्य भारत का सुनेल टप्पा– संयुक्त राजस्थान से	01–11–1956

गईं, तो मत्स्य संघ को अलग इकाई के रूप में रखने का कोई अर्थ नहीं था। इन रियासतों को भी वृहत् राजस्थान का हिस्सा बनाने के लिए डॉ. शंकरराव देव समिति का गठन किया गया। भारत सरकार ने समिति की सिफाारिश को ध्यान में रखते हुए मत्स्य संघ की चारों इकाइयों को 15 मई, 1949 ई. को राजस्थान में मिला दिया। वहाँ के प्रधानमंत्री, शोभाराम को शास्त्री–मंत्रिमण्डल में शामिल कर लिया गया।

सिरोही का प्रश्न :

गुजरात के नेता सिरोही स्थित आबू–पर्वत के सैलानी केन्द्र को गुजरात का अंग बनाना चाहते थे। रियासती विभाग उनके प्रभाव में था। अतः जनता के विरोध के बावजूद भी रियासती विभाग ने नवम्बर, 1947 ई. में सिरोही को राजपूताना एजेन्सी से हटाकर गुजरात एजेन्सी के अन्तर्गत कर दिया था।

सिरोही की जनता ने माँग की कि सिरोही को बम्बई में न मिलाया जाकर संयुक्त राजस्थान में मिलाया जाए। कुछ ही दिनों बाद उदयपुर ने भी संयुक्त राजस्थान में शामिल होने का फैसला किया। इस अवसर पर अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा के महामंत्री श्री हीरालाल शास्त्री ने अपने 10 अप्रैल के तार में सरदार वल्लभभाई पटेल को लिखा, '' यह जानकर प्रसन्नता हुई कि उदयपुर संयुक्त राजस्थान में शामिल हो रहा है। इससे सिरोही का राजस्थान में शामिल होना और भी अवश्यंभावी हो गया है। फिर हमारे लिए सिरोही का अर्थ है, गोकुलभाई। बिना गोकुलभाई के हम राजस्थान को नहीं चला सकते।'' शास्त्री जी को इस तार का कोई उत्तर नहीं मिला।

18 अप्रैल को संयुक्त राजस्थान के उद्घाटन के अवसर पर उदयपुर में राजस्थान के कार्यकर्ताओं का एक शिष्टमण्डल पं. जवाहरलाल नेहरू से मिला और उनको सिरोही के सम्बन्ध में प्रदेश की जनता की भावनाओं से अवगत कराया। पं. नेहरू ने इस संबंध में सरदार पटेल से बातचीत की, किंतु फिर भी सरदार पटेल ने गोकुलभाई भट्ट के जन्म स्थान हाथल व कुछ अन्य स्थानों को छोड़कर शेष सिरोही गुजरात में शामिल कर दिया।

इस निर्णय के फलस्वरूप सिरोही में व्यापक आन्दोलन उठ खड़ा हुआ। यह आन्दोलन तब समाप्त हुआ, जब भारत सरकार ने अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का आश्वासन दिया। राजस्थान के साथ किए गए इस अन्याय का निराकरण 1 नवम्बर, 1956 को हुआ, जबकि राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिश के आधार पर सिरोही का माउण्ट आबू वाला इलाका पुनः गुजरात से निकाल कर राजस्थान में मिलाया गया।

अजमेर का विलय :

अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् की राजपूताना प्रान्तीय सभा की सदैव यह माँग रही थी कि वृहत् राजस्थान में न केवल प्रान्त की सभी रियासतें, वरन् अजमेर का इलाका भी शामिल हो। अजमेर कांग्रेस नेतृत्व कभी इस पक्ष में नहीं रहा। सन् 1952 के आम चुनावों के बाद वहां हरिभाउ उपाध्याय के नेतृत्व में कांग्रेस मंत्रिमण्डल बन चुका था। अब तो वहां का नेतृत्व यह दलील देने लगा कि प्रशासन की दृष्टि से छोटे राज्य ही बनाए रखना उचित है। किंतु राज्य पुनर्गठन आयोग ने अजमेर के नेताओं के इस तर्क को स्वीकार नहीं किया और सिफारिश की कि उसे राजस्थान में मिला देना चाहिए। तदनुसार 1 नवम्बर, 1956 को माउण्ट–आबू क्षेत्र साथ ही साथ अजमेर मेरवाड़ा भी राजस्थान में मिला दिया गया। इस प्रकार राजस्थान निर्माण की जो प्रक्रिया मार्च, 1948 में शुरू हुई, वह 1 नवम्बर, 1956 को सम्पूर्ण हुई।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. 'राजस्थान संघ' के निर्माण की योजना सर्वप्रथम किसके द्वारा प्रस्तुत की गई?
2. 'मत्स्य संघ' का निर्माण किन देशी रियासतों को मिलाकर हुआ?
3. मेवाड़ का 'संयुक्त राज्य राजस्थान' में विलय कब हुआ ?
4. 'वृहत राजस्थान' का निर्माण कब हुआ?
5. 'वृहत् राजस्थान' की राजधानी का चयन करने की समिति किसकी अध्यक्षता में बनी?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न :

1. 'मत्स्य संघ' के निर्माण के घटनाक्रम को समझाइए।
2. मेवाड का 'संयुक्त राज्य राजस्थान' में विलय किस प्रकार हुआ?
3. राजस्थान में सिरोही के विलय को समझाइए।

निबंधात्मक प्रश्न :

1. राजस्थान के एकीकरण के विभिन्न चरणों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
2. राजस्थान के एकीकरण में तत्कालीन केन्द्र सरकार की भूमिका को रेखांकित कीजिए।

अध्याय

7

राजस्थान की शौर्य परम्परा

भारत के इतिहास में राजस्थान का विशेष स्थान उसकी अनूठी शौर्य परम्परा के कारण रहा है। राजस्थान की भूमि अपने वीर सपूतों के लिए प्रसिद्ध रही है। यह शौर्य जहां एक ओर प्राचीन समय में घटित हुए सभ्यतामूलक विकास में देखा जा सकता है, वहीं मध्य युग और आधुनिक युग में बाहरी आक्रमणों के समय स्थानीय शासकों एवं जनसाधारण द्वारा किए गए संघर्षों में भी दिखलाई देता है। यहां के महल, किले और अन्य ऐतिहासिक इमारतें, यहां के वीरों के अदम्य साहस की गाथाएँ कहते हैं। राजस्थान की इस शूरवीरता को प्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासविद् जेम्स टॉड ने इन शब्दों में उभारा कि, ''राजस्थान में कोई छोटा–सा राज्य भी ऐसा नहीं है, जिसमें थर्मोपली जैसी रणभूमि न हो और शायद ही ऐसा कोई नगर ना मिले जहाँ लियोनिदास जैसा वीर पुरुष पैदा नहीं हुआ हो।''

राजस्थान में आरम्भ से ही रियासती और सामंती संघर्ष इतने ज्यादा रहे कि यहां युद्धों का एक लम्बा सिलसिला देखने को मिलता है। राजस्थान के शासकों ने तुर्कों, दिल्ली सल्तनत के शासकों, सिंध से आए आक्रमणकारियों, बंगाल के पाल शासकों, दक्षिण के चालुक्यों, पूर्व के चंदेलों और गहडवालों के तथा मराठों के विरुद्ध अनेक संघर्ष किए। तराइन, खानवा और हल्दी घाटी सरीखे इतिहास प्रसिद्ध युद्ध राजस्थान के शासकों द्वारा लड़े गए, जिनसे पृथ्वीराज चौहान, राणा सांगा और महाराणा प्रताप जैसे वीर शासकों के शौर्य का अंदाजा होता है।

राजस्थान की आम जनता में स्वामीभक्ति की एक महत्त्वपूर्ण परम्परा होने से जनता ने अपने स्वामी अथवा शासक की रक्षा के लिए युद्धभूमि में अपने प्राणों की आहुति दी है। राजस्थान का इतिहास स्वामीभक्ति के चलते अपने प्राणोत्सर्ग करने वाले अनेक वीरों की गाथाओं से भी भरा पड़ा है। इस संदर्भ में पन्ना धाय, चंदन और कीरतबारी की शौर्यगाथा के साथ ही चेतक का बलिदान, महाराणा प्रताप के सेनापति हकीम खाँ सूरी की वीरता, भामाशाह की स्वामीभक्ति और दुर्गादास राठौड़ की वीरता का पता चलता है। जेम्स टॉड ने लिखा है कि ''राजस्थान की भूमि में ऐसा कोई फूल नहीं उगा, जो राष्ट्रीय वीरता और त्याग की सुगंध से भरकर नहीं झूला हो।''

कवि प्रदीप ने भी राजस्थान की इस शूरवीरता को रेखांकित करते हुए अपने प्रसिद्ध गीत 'आओ बच्चों तुम्हें दिखाएं झांकी हिंदुस्तान की' में लिखा है :

'ये है अपना राजपूताना नाज इसे तलवारों पे,
इसने अपना सारा जीवन काटा बरछी तीर कमानों पे,

ये प्रताप का वतन पला है आजादी के नारों पे,
कूद पड़ी थी यहाँ हजारों पद्मिनियाँ अंगारों पे,
बोल रही है कण कण से कुरबानी राजस्थान की,
इस मिट्‌टी से तिलक करो ये धरती है बलिदान की।'

अंग्रेजी शासनकाल में साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध संघर्ष में भी राजस्थान के लोगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। 1857 की क्रांति की ज्वाला राजस्थान में भी धधकी और नसीराबाद, आउवा और कोटा में राजस्थान के वीर सपूतों ने अंग्रेजी सेना के साथ जबर्दस्त संघर्ष किया । शाहपुरा, भीलवाड़ा के बारहठ परिवार ने अंग्रेजों के विरुद्ध सशस्त्र क्रांति में अपना अमूल्य योगदान दिया। 1912 ई. में लॉर्ड हार्डिंग को मारने के प्रयास में हुए दिल्ली बम कांड में प्रतापसिंह और जोरावरसिंह बारहठ की महत्वपूर्ण भूमिका रही। अंग्रेजों के साम्राज्यवादी शासन के दौर में राजस्थान शेष भारत के समान ही गांधी के अहिंसात्मक तथा सर्वोदयी आंदोलनों का केन्द्र बना, जिनमें राजस्थान की जनता ने अभय होकर भाग लिया। गांधीजी के नेतृत्व में चल रहे स्वाधीनता आंदोलनों में राजस्थान के अलग–अलग हिस्सों में प्रजामंडलों की स्थापना हुई, जिन्होंने अहिंसक तरीके से अंग्रेजों के साम्राज्यवादी शासन के विरुद्ध राजस्थान के लोगों को एकत्रित किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब यहां के शासक अपनी स्वाधीनता–चेतना को विस्मृत कर अंग्रेजों की ओर झुकाव रखने लगे और उनके साथ मिलकर किसानों का दोहरा शोषण करने लगे, तब किसानों ने संगठित होकर स्थानीय जमींदारों के विरुद्ध संघर्ष किया। इस संदर्भ में बिजौलिया किसान आंदोलन और बेगूं किसान आंदोलन महत्त्वपूर्ण थे। स्थानीय आदिवासियों की वीर गाथा भी कुछ कम नहीं हैं। 1883 ई. में गुरू गोविन्द गिरि ने सम्प सभा की स्थापना कर दक्षिण राजस्थान के भील और गरासियों को एकत्रित कर उनमें जागृति उत्पन्न की तथा उनमें सुधार की अलख जगाई, तो स्थानीय सामंत और अंग्रेज घबरा गए। इसकी परिणति यह हुई कि 1913 में मानगढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा के 1500 से भी अधिक आदिवासियों को अंग्रेजों ने घेरकर मार डाला। गुरू गोविन्द गिरि के बाद मोतीलाल तेजावत ने मेवाड़ क्षेत्र के आदिवासियों को बेगार, अनुचित लगानों और भारी भूमि कर के उन्मूलन के लिए एकत्रित किया। इससे पूर्व 1840 ई. में बनी मेवाड़ भील कोर ने 1857 ई. के विद्रोह में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

संक्षेप में कहा यह जा सकता है कि राजस्थान के कण–कण में स्वाधीनता की चेतना समाज के विभिन्न वर्गों में आरम्भ से ही विद्यमान रही है और जब–जब इस स्वाधीन चेतना को आंतरिक अथवा बाह्य किसी भी प्रकार की चुनौती मिली, यहाँ की जनता ने उसका वीरतापूर्ण तरीके से मुकाबला किया है। इन वीरतापूर्ण संघर्षों का अध्ययन हम पूर्व के अध्यायों में कर चुके हैं। इस अध्याय में हम स्वतंत्रता पश्चात राजस्थान की शौर्य परम्परा के विकास को समझने का प्रयास करेंगे।

स्वतंत्रता पश्चात राजस्थान में शौर्य–परम्परा की निरंतरता :

आजादी के बाद राजस्थान के नौजवान रणबांकुरों ने भारत की सेना में भर्ती होकर राजस्थान के शौर्य एवम् साहस की परम्परा को आगे बढ़ाया है। राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अनेक बार यहां के सैनिकों ने अपने प्राणों की आहुति दी है। यह बात यहां के रणबांकुरे सैनिकों को मिले सैन्य पदकों, अलंकरणों और पुरस्कारों से अभिव्यक्त होती है।

राजस्थान के परमवीर चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी :

परमवीर चक्र भारत का सर्वोच्च शौर्य सैन्य अलंकरण है। यह मुख्यतः दुश्मनों की उपस्थिति में उच्च कोटि की शूरता, त्याग और बलिदान के लिए प्रदान किया जाता है। राजस्थान के शहीद मेजर पीरू सिंह शेखावत को 1952 में और शहीद मेजर शैतान सिंह को 1963 में मरणोपरांत परमवीर चक्र से नवाजा गया। यहाँ हम इन दोनों बहादुरों की शौर्य गाथा की चर्चा करेंगे।

शहीद मेजर पीरू सिंह शेखावत :

आजादी के तुरन्त पश्चात अक्टूबर 1947 में पाकिस्तान ने कबाईलियों के माध्यम से कश्मीर पर आक्रमण किया। इस युद्ध में दुश्मनों से लोहा लेते हुए राजस्थान के शेखावटी क्षेत्र के वीर सेनानी मेजर पीरू सिंह शेखावत शहीद हो गए। मेजर पीरू सिंह शेखावत का जन्म 20 मई 1918 को गांव रामपुर बेरीए, जिला झुंझुनू में हुआ था। 1936 में वे राजपूताना रायफल्स में भर्ती हुए।

1948 की गर्मियों में कबाईलियों और पाकिस्तानी सेना ने संयुक्त रूप से कश्मीर के टीथवाल सेक्टर पर आक्रमण किया। इस हमले पर दुश्मन पहाड़ी पर जमा थे, उस पहाड़ी पर कब्जा करने का कार्य 6 राजपूताना रायफल्स को सौंपा गया, जिसकी अगुवाई पीरू सिंह शेखावत कर रहे थे। आधे से ज्यादा साथियों के शहीद होने के उपरांत भी पीरू सिंह उस मीडियम मशीनगन की ओर बढ़े, जो उनके साथियों पर मौत बरसा रही थी। उन्होने मशीनगन चला रही दुश्मन सेना के सभी सैनिकों को मारकर उस पोस्ट पर कब्जा कर लिया। वे दूसरी मशीनगन की ओर बढ़ रहे थे, तभी एक बम उन पर गिरा और वे घायल हो गए। घायल अवस्था में भी उन्होंने दुश्मन देश के सैनिकों को मारना जारी रखा। अंततः 18 जुलाई 1948 को वे शहीद हो गए। उनकी इस वीरता और बलिदान के लिए उन्हें मरणोपरांत भारत के सर्वोच्च सैनिक सम्मान ''परमवीर चक्र'' से नवाजा गया।

मेजर पीरू सिंह शेखावत

शहीद मेजर शैतान सिंह :

1961–62 में हमारे पड़ोसी देश चीन ने भारत पर हमला किया। भारत ने न्यूनतम संसाधनों के उपरांत भी यह लड़ाई बहादुरी के साथ लड़ी। इसमें भारत के कई जांबाज सैनिक शहीद हुए। राजस्थान के मेजर शैतान सिंह भी इनमें से एक हैं। मेजर शैतान सिंह का जन्म 01 दिसम्बर 1924 को जोधपुर में हुआ।

1962 के युद्ध में मेजर शैतान सिंह के नेतृत्व में 13वीं कुमायूंनी बटालियन की सी कंपनी रेजांग ला दर्रे में चीनी सैनिकों का मुकाबला कर रही थी। 18 नवम्बर 1962 को पहली खेप में 350 चीनी सैनिकों ने और दूसरी खेप में 400 चीनी सैनिकों ने हमला बोला, किन्तु मेजर शैतान सिंह के नेतृत्व में भारतीय सेना ने मुंह तोड़ जवाब दिया। इस हमले में घायल होने के उपरांत भी वे एक पोस्ट से दूसरे पोस्ट पर जाकर सैनिकों का हौंसला बढ़ाते रहे। उनकी सामरिक सूझबूझ और साहसिक नेतृत्व के कारण भारत के सैनिकों ने 1000 से भी अधिक चीनी सैनिकों को मार गिराया। किन्तु इस संघर्ष में मेजर

मेजर शैतान सिंह

शैतान सिंह वीर गति को प्राप्त हुए। उनके बारे में प्रसिद्ध है कि इस संघर्ष में उनके दोनों हाथ लहुलुहान हो गए, तो भी मशीनगन को अपने पैर से बांधकर वे पैर से शत्रुओं पर मशीनगन तब तक चलाते रहे, जब तक कि उनके प्राण पखेरू नहीं उड़े। उनके इस अदम्य साहस के लिए मरणोपरांत 1963 ई. में उन्हें परमवीर चक्र से अलंकृत किया गया।

राजस्थान के महावीर चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी :

महावीर चक्र परमवीर चक्र के बाद भारत का दूसरा उच्च शौर्य अलंकरण है। यह युद्ध के समय वीरता दिखलाने के लिए दिए जाने वाला पदक है। यह सम्मान मुख्यतः युद्ध की स्थिति में उच्च कोटि की शूरता, त्याग और बलिदान के लिए सैनिकों और असैनिकों को प्रदान किया जाता है। यहाँ हम राजस्थान के उन बहादुरों की शौर्य गाथा की चर्चा करेंगे, जिन्हें विभिन्न युद्धों के दौरान बहादुरी के लिए महावीर चक्र से सम्मानित किया गया है।

सूबेदार चूनाराम फागड़िया :

राजस्थान का पहला महावीर चक्र सूबेदार चूनाराम फागड़िया को 1948 ई. के भारत–पाकिस्तान युद्ध में अदम्य वीरता का परिचय देने के लिए मिला। सूबेदार चूनाराम फागड़िया का जन्म 1923 ई. में सीकर जिले की लक्ष्मणगढ तहसील के गांव डलमास की ढाणी में हुआ। जून 1948 में कश्मीर के पुंछ–राजौरी सेक्टर में एक पहाड़ी पर डटे दुश्मनों को हटाने की जिम्मेदारी राजपूताना रायफल्स की टुकड़ी को सौंपी गई, जिसमें हवलदार चूनाराम फागड़िया नेतृत्व कर रहे थे। जब वे दुश्मन के नजदीक पहुंचे, तो उन पर ग्रेनेड फेंका गया, किन्तु चूनाराम उससे भयभीत नहीं हुए और उन्होंने दो दुश्मनों को मार गिराया, जबकि तीन को घायल कर दिया। उनके इस अदम्य साहस के लिए भारत सरकार ने उन्हें महावीर चक्र प्रदान किया।

चूनाराम फागड़िया

शहीद सैनिक ढोकलसिंह :

भारत–पाकिस्तान की इस लडाई में जोधपुर जिले के सेखला जुनावास गांव में जन्मे बहादुर सैनिक ढोकलसिंह को भी महावीर चक्र से नवाजा गया। उनका जन्म 1 दिसम्बर 1923 को हुआ। 21 वर्ष की आयु में 1944 में वे भारत की सेना की 6 राजपूताना राइफल्स में सम्मिलित हुए। अप्रैल 1948 में ढोकलसिंह की सैन्य टुकड़ी कश्मीर के उरी क्षेत्र में तैनात थी। 29 अप्रैल को ढोकलसिंह की सैन्य टुकड़ी को ''उरी का मोर्चा'' कहलाने वाली नवाला पिकेट को दुश्मनों के कब्जे से छुड़ाने का आदेश मिला। 20 घंटे तक चले संघर्ष में दुश्मनों द्वारा बरसाई गई गोलियों और लगाई गई आग की परवाह किए बिना ढोकलसिंह आगे बढ़ते रहे और ग्रेनेड से घायल होने के उपरांत भी उन्होने पांच दुश्मनों को मार गिराया। इस हमले वे शहीद हो गए। उन्हें मरणोपरांत महावीर चक्र दिया गया।

ब्रिगेडियर रघुवीर सिंह राजावत :

ब्रिगेडियर रघुवीर सिंह राजावत का जन्म 02 नवम्बर 1923 को हुआ। 1965 के भारत पाकिस्तान युद्ध के समय रघुवीर सिंह 18 राजपूताना राइफल्स रेजीमेंट में तैनात थे और उनकी सैन्य टुकड़ी को पंजाब के खेमकरण और आसाल उत्तर क्षेत्र की कमान संभालनी थी। उनकी टुकड़ी पर 9 नवम्बर 1965 को पाकिस्तान के सैनिकों ने अर्द्धरात्रि में टैंकरों से हमला कर दिया। ब्रिगेडियर रघुवीर सिंह के नेतृत्व में

भारतीय सेना की इस टुकड़ी ने 22 पैटन टैंक को नष्ट कर दिया और दुश्मनों को भागने पर मजबूर कर दिया। उनके इस साहस के लिए तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. सर्वेपल्ली राधाकृष्णन ने उन्हें महावीर चक्र से सम्मानित किया।

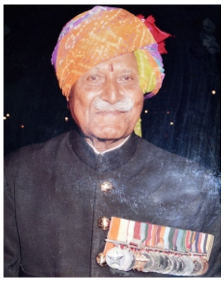

ब्रिगेडियर रघुवीर सिंह राजावत

कर्नल उदय सिंह भाटी :

राजस्थान के एक और वीर सपूत को 26 जनवरी 1972 को महावीर चक्र से सम्मानित किया गया। यह वीर सपूत हैं– कर्नल उदय सिंह भाटी, जो जोधपुर क्षेत्र के शेरगढ से संबंध रखते हैं। 1971 के दिसम्बर माह में उनकी तैनाती कारगिल सेक्टर में थी, जब पाकिस्तान ने भारत पर हमला किया। उनके नेतृत्व में लद्दाख स्काउट की तीन टुकड़ियों को चालुंका से तारटोक तक का क्षेत्र कब्जे में करने का काम सौंपा गया। सभी तरफ से कटा हुआ 18000 फीट की ऊँचाई पर शून्य डिग्री तापमान वाला यह ऐसा क्षेत्र था, जिस पर चलना दुर्गम था। कर्नल उदय सिंह के कुशल नेतृत्व के कारण संचार से कटे उस दुर्गम क्षेत्र में उनके दल ने दुश्मनों को पीछे हटने पर मजबूर कर दिया। अपनी सूझबूझ से उन्होंने अपने साथियों का हौंसला बनाए रखा और दस दिन तक चले इस ऑपरेशन में दुश्मन सेना को बड़ा नुकसान पहुँचाया। उनके इस साहसिक योगदान के लिए उन्हें महावीर चक्र दिया गया।

कर्नल उदय सिंह भाटी

ले. कर्नल हणूत सिंह :

ले. कर्नल हणूत सिंह का जन्म 6 जुलाई 1933 को जसोल, बाडमेर में हुआ। 1971 की भारत–पाकिस्तान लड़ाई के समय ले. कर्नल हणूत सिंह पूना हॉर्स कमांड में थे। 16 दिसम्बर 1971 को हणूत सिंह शक्करगढ सेक्टर में तैनात थे। उनकी टुकड़ी को बसंतर नदी पर दुश्मनों से लोहा लेने भेजा गया।

दुश्मनों ने जमीन के भीतर विस्फोटक बिछा रखे थे किन्तु अपनी जान की परवाह किए बिना हणूत सिंह ने लगातार दो दिनों तक अपने साथियों के साथ दुश्मनों का सामना किया और 700 मीटर अंदर तक जाकर दुश्मनों के करीब 50 टैंक नष्ट कर दिए। उनके इस साहसिक नेतृत्व के लिए उन्हें महावीर चक्र दिया गया। 1971 के युद्ध के बाद पाकिस्तान ने भी उन्हें ''फक्र–ए–हिन्द'' से नवाजा। 1 1
अप्रैल 2015 को उनका निधन हो गया।

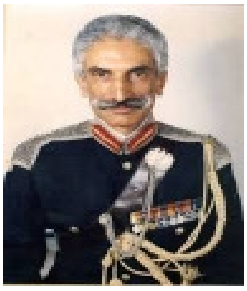

ले. कर्नल हणूत सिंह

ले. कर्नल सवाई भवानी सिंह :

राजस्थान के एक और वीर सपूत जयपुर के ले.कर्नल सवाई भवानी सिंह 5 और 6 दिसम्बर 1971 को अपनी पैराशूट रेजीमेंट के साथ चचरो और वीरवाह पोस्ट पर तैनात थे। उन्होंने लगातार चार दिन और रात दुश्मनों के क्षेत्र पर आक्रमण किया और बिना अपनी जान की परवाह किए साथियों का हौंसला बढाया तथा दुश्मनों के एक बड़े क्षेत्र पर अधिकार करने में कामयाबी हासिल की। इस उपलब्धि के लिए भारत सरकार ने उन्हें महावीर चक्र से सम्मानित किया।

ले. कर्नल भवानी सिंह

ग्रुप कैप्टन चंदन सिंह :

ग्रुप कैप्टन चंदन सिंह

ग्रुप कैप्टन चंदन सिंह भारतीय वायु सेना के अधिकारी थे और 1971 की लड़ाई के समय वे असम में तैनात थे। उन्होंने करीब 3000 सैनिकों और 40 टन युद्ध सामग्री को अत्यंत सीमित क्षमता वाले हेलीकॉप्टर से हवाई मार्ग द्वारा ढाका की ओर पहुँचाने के लिए अपने साथियों के साथ उड़ान भरी। उन्हें रात में अत्यंत असुरक्षित क्षेत्रों में यह लैंडिंग करानी थी। 7 और 8 दिसम्बर को उन्होंने स्वयं 8 बार उड़ान भरी और शत्रुओं की सीमा के भीतर जाकर इस ऑपरेशन को सफलतापूर्वक अंजाम दिया। जमीन से उनके हैलीकॉप्टर को निशाना बनाया जा रहा था, किन्तु अपनी जान की परवाह किए बिना उन्होंने 18 बार इस मिशन को पूरा किया। उनकी इस साहसिक सफलता के लिए 1972 में उन्हें महावीर चक्र दिया गया।

नायक सुगन सिंह :

नायक सुगन सिंह

नागौर जिले के निवासी नायक सुगन सिंह 1971 की भारत–पाकिस्तान लड़ाई के समय 7 राजपूताना राईफल्स में त्रिपुरा में नियुक्त थे। 9 दिसम्बर 1971 को उन्हें उनके दल के साथ मायनामाटी नामक स्थान पर शत्रुओं पर आक्रमण का आदेश मिला, जहां वे पक्के बंकर में मशीनगनों के साथ थे। नायक सुगन सिंह को एक सेक्शन नष्ट करने का आदेश मिला। नायक सुगन सिंह ने एक मीडियम मशीनगन पोस्ट को निशाना बनाया और उसे नष्ट कर दिया। इस प्रक्रिया में उनके कंधे पर गोली लगी फिर भी बहादुरी दिखलाते हुए उन्होंने शत्रुओं के बंकर पर हथगोला फैंका और दो दुश्मनों को मार गिराया। तदुपरांत उन्होने दूसरी मीडियम मशीनगन पोस्ट को निशाना बनाया । हालांकि वे घायल अवस्था में गिर गए, फिर भी ग्रेनेड से दूसरे बंकर को नष्ट कर तीन शत्रु सैनिकों को मार गिराया। इस हमले में वे स्वयं भी शहीद हो गए। उन्हें मरणोपरांत महावीर चक्र से सम्मानित किया गया।

नायक दिगेन्द्र कुमार परस्वाल :

नायक दिगेन्द्र कुमार परस्वाल का जन्म 3 जुलाई 1969 को सीकर जिले के झालरा गांव में हुआ था। उनके पिता शिवदान जी स्वतंत्रता सेनानी थे और बाद में वे सेना में भर्ती हो गए। 1948 की लड़ाई में शिवदान जी की सांस की नली में गोलियां लगीं। पिता की प्रेरणा से दिगेन्द्र भी सेना में भर्ती हो गए। वे 2 राजपूताना राईफल्स में थे। कारगिल युद्ध के समय उनकी टुकड़ी को तोलोलिंग की चोटी पर कब्जा करने का लक्ष्य दिया गया, जो सबसे मुश्किल कार्य था। दिगेन्द्र इसके लिए 6 किलो वजनी रूसी रस्सा और ऐसी कीलें जो चट्टानों में घुस सकती थीं, साथ लीं और अपने साथियों और सैन्य सामग्री के साथ 10 जून 1999 की शाम तोलोलिंग की चोटी की ओर आगे बढ़े। कीलें चट्टानों में ठोकते गए और उन पर रस्सा

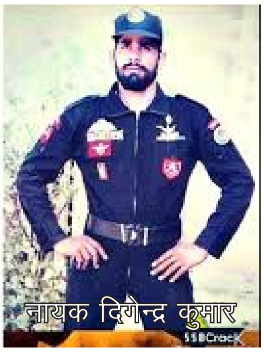

बांध आगे बढते गए। 14 घंटे के श्रमसाध्य सफर के बाद वे लक्ष्य पर 12 जून 1999 की दोपहर पहुंचे। पाकिस्तानी सेना ने 11 बंकर वहां बना रखे थे। रात के अंधेरे में वे चोटी की ओर बढ़े किन्तु चोटी पर दुश्मन मशीनगन के साथ घात लगाए बैठा था। दिगेन्द्र का हाथ अचानक मशीनगन की बैरल को छू गया जो बम बरसाने के कारण गरम हो रहा था। दिगेन्द ने उसका मुंह बंकर की ओर कर दिया, इससे एक बंकर नष्ट हो गया।

दुश्मन के करीब 250 कमांडो और आर्टिलरी लगातार गोले बरसा रहे थे। इधर से दिगेन्द्र और उनके साथी भी फायरिंग कर रहे थे किन्तु गोले के हमले से दिगेन्द्र के हाथ से मशीनगन छूट गई। उनके साथी एक–एक कर मारे गए। किन्तु दिगेन्द्र ने हिम्मत नहीं हारी और 11 बंकरों पर 19 हथगोले फैंके। दुश्मन के मेजर अनवर को मार गिराया और 13 जून 1999 को तोलोलिंग की चोटी पर सुबह 4 बजे तिरंगा लहरा दिया। उनकी इस बहादुरी पर भारत सरकार ने उन्हें 15 अगस्त 1999 को महावीर चक्र से अलंकृत किया।

राजस्थान के अशोक चक्र विजेता प्रमुख वीर सेनानी :

परमवीर चक्र और महावीर चक्र के बाद भारत का अन्य उच्च शौर्य अलंकरण अशोक चक्र है। यह शांति के समय वीरता दिखलाने के लिए दिए जाने वाला सबसे ऊंचा पदक है। यह सम्मान मुख्यतः शांति की स्थिति में उच्च कोटि की शूरता, त्याग और बलिदान के लिए सैनिकों और असैनिकों को प्रदान किया जाता है। अब तक भारत में 83 लोगों को यह सम्मान प्राप्त हुआ है। इनमें राजस्थान के बहादुर सैनिक हवलदार शम्भूपाल सिंह को 1961 में, सूबेदार लालसिंह और सूबेदार मानसिंह को 1962 में, सीकर के कैप्टन महेन्द्र सिंह तँवर को मरणोपरांत 1965 में, जयपुर के सैकिण्ड ले. पी. एन. दत्त को 1998 में, ममडोला, डीडवाना के डिफेन्डर सुलतान सिंह राठौड़ को और सूबेदार सुरेश चन्द्र यादव को 2003 में अपनी बहादुरी के लिए अशोक चक्र से सम्मानित किया गया है। पंजाब में वीरतापूर्ण बलिदान के लिए झालावाड़ क्षत्र के निर्भय सिंह को 1985 में भारत सरकार ने अशोक चक्र से अलंकृत किया।

कैप्टन महेन्द्र सिंह तंवर

राजस्थान के कीर्ति चक्र, शौर्य चक्र, वीर चक्र, सेना मेडल और विशिष्ट सेवा मेडल विजेता प्रमुख वीर सेनानी :

कीर्ति चक्र भी शांति के समय वीरता दिखलाने के लिए दिए जाने वाला एक महत्वपूर्ण अलंकरण है। यह सम्मान मुख्यतः शांति की स्थिति में उच्च कोटि की शूरता, त्याग और बलिदान के लिए सैनिकों और असैनिकों को प्रदान किया जाता है। अब तक भारत में 458 लोगों को यह सम्मान प्राप्त हुआ है। इनमें राजस्थान के चूरू जिले के लखउ के बहादुर सैनिक कैप्टन करणी सिंह राठौड़, मेजर सुखसिंह शेखावत, रामदास, जोधपुर के हवलदार अमर सिंह राठौड़, राणेराव, जोधपुर के सूबेदार लालसिंह राठौड़, 1972 में कांकडवा, मेवाड़ के रणशेर सिंह राणावत, 1995 में चित्तौड़ जिले के बिग्रेडियर महावीर सिंह, गांव धानी दौलतसिंह, अलवर के कर्नल सौरभ सिंह शेखावत प्रमुख हैं। कर्नल सौरभ सिंह शेखावत को उनके असाधारण साहस और वीरता के लिए कीर्ति चक्र के

पूरन सिंह वीर चक्र

अतिरिक्त शौर्य चक्र, सेना मेडल, विशिष्ट सेवा मेडल, सामान्य सेवा मेडल भी प्राप्त हुआ है। 27 जनवरी 2006 को जम्मू काश्मीर के पुंछ क्षेत्र में दो आतंकवादियों से लोहा लेते हुए वीरता का परिचय देते हुए बलिदान होने वाले बीकानेर के मेजर जेम्स थॉमस को भी 2006 में कीर्ति चक्र से अलंकृत किया गया।

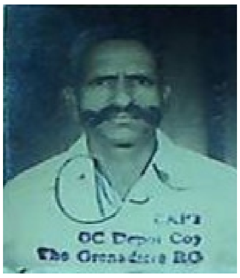

जमादार छोटू सिंह

शौर्य चक्र भी शांति के समय वीरता दिखलाने के लिए दिए जाने वाला एक महत्वपूर्ण सम्मान है। शौर्य चक्र से अलंकृत होने वाले राजस्थान के वीर जांबाज अग्रांकित हैं–बिग्रेडियर बाघसिंह राठौड़ (बीकानेर,1964), कैप्टन नरपत सिंह राठौड़ (जोधपुर, 1970), सार्जेन्ट जगमाल सिंह (बाड़मेर,1974), मेजर रणवीर सिंह शेखावत (झुंझनू, 1983), जमादार छोटूसिंह (1983), कैप्टन हरेन्द्र सिंह (अजमेर, 1992), मेजर रणवीर सिंह (झुंझनू, 1995), मेजर जितेन्द्र सिंह शेखावत, (जयपुर, 1998), भूपेन्द्र सिंह राठौड़ (हनुमानगढ, 2000), लेफ्टिनेन्ट अरविन्द कुमार बुरडक (पल्थाना, सीकर, 2002), नायक गोकुल सिंह (2002) लेफ्टिनेन्ट कृष्ण दयाल सिंह राठौड़ (भीलवाडा, 2007), लेफ्टिनेन्ट कर्नल सुमेर सिंह (नागौर, 2012)।

अरविन्द बुरडक

वीर चक्र युद्ध के समय दिए जाने वाला महत्त्वपूर्ण वीरता पदक है। यह सम्मान युद्ध में असाधारण वीरता, साहस, त्याग और बलिदान दिखलाने वाले बहादुर सैनिकों को दिया जाता है। वीर चक्र से अलंकृत होने वाले राजस्थान के वीर जाबांज अग्रांकित हैं– मेजर पूरन सिंह (बीकानेर, 1966), मोहम्मद अयुब खां अमीरखानी (झुंझुंनूं, 1966), कर्नल मेघसिंह राठौड़ (जोधपुर, 1966), लांस नायक भंवर सिंह राठोड़ (बीकानेर,1966), रफीक खान (बीकानेर, 1972), कर्नल गोविन्द सिंह शेखावत (सीकर, 1972), बिग्रेडियर जगमाल सिंह (बीकानेर, 1972), ग्रेनेडियर मुराद खां (नागौर, 1972), नायक हवलदार सरदार खान गौराण (नागौर, 1972), मेजर महमूद हसन खां (झुंझुंनूं, 1972), मेजर राजेन्द्र सिंह राजावत (1972), कर्नल श्यामवीर सिंह राठौड़ (कोटा,1972), नायब रिसालदार नूर मोहम्मद खां अलफखानी (नागौर, 1972), बी.एस.एफ. के डिप्टी कमांडेंट चंदन सिंह चंदेल (1972), कैप्टन नवल सिंह राजावत (जयपुर,1972), बिग्रडियर हमीर सिंह (नागौर, 1973), 8वीं जाट रेजिमेंट के शीशराम गिल (कारगिल युद्ध), स्क्वाड्रन लीडर अजय आहूजा (कोटा, कारगिल युद्ध), नायब सूबेदार रामपाल सिंह (कोटपुतली, कारगिल युद्ध) आदि। इनके अतिरिक्त मेजर भानुप्रताप सिंह को सेना मेडल और राजपुरा, सीकर के मेजर सुरेन्द्र पूनिया को विशिष्ट सेवा पदक मिल चुका है।

अजय आहूजा

नायब सूबेदार रामपाल सिंह

देश की सीमा की सुरक्षा करते हुए बेमिसाल कुर्बानियां देने वाले इन योद्धाओं के देशानुराग और साहस को हमें हर पल अपनी स्मृति में रखना चाहिए। कवि प्रदीप ने अपने प्रसिद्ध गीत 'ऐ मेरे वतन के लोगों !' में इसी भाव को इन शब्दों में व्यक्त किया है :

"थी खून से लथ–पथ काया
फिर भी बन्दूक उठाके
दस–दस को एक ने मारा
फिर गिर गये होश गँवा के
जब अन्त समय आया तो
कह गए के अब मरते हैं

खुश रहना देश के प्यारों ....
खुश रहना देश के प्यारों
अब हम तो सफर करते हैं
अब हम तो सफर करते हैं

क्या लोग थे वो दीवाने
क्या लोग थे वो अभिमानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो कुर्बानी

तुम भूल न जाओ उनको
इसलिये कही ये कहानी
जो शहीद हुए हैं उनकी
जरा याद करो कुर्बानी

जय हिन्द जय हिन्द
जय हिन्द की सेना
जय हिन्द की सेना

जय हिन्द जय हिन्द जय हिन्द ... "

कवि प्रदीप का मूल नाम रामचन्द्र नारायण द्विवेदी था। इनका जन्म 6 फरवरी 1915 को मध्यप्रदेश के उज्जैन के बड़नगर नामक स्थान पर हुआ था। कवि प्रदीप ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व और पश्चात् अपनी कविताओं और गीतों से जनमानस को राष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत किया।

पुलवामा हमला और राजस्थान के वीर योद्धा

पुलवामा जिला जम्मू–कश्मीर में स्थित है। यह जम्मू–कश्मीर राष्ट्रीय राजमार्ग पर आता है। 14 फरवरी, 2019 को केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल (CRPF) के करीब 2,500 भारतीय सुरक्षाकर्मी इस राजमार्ग से अपने 78 वाहनों द्वारा गुजर रहे थे। ये सभी छुट्टियां बिताकर ड्यूटी पर लौट रहे थे। यकायक पुलवामा जिले के निकट लेथपोरा इलाके में एक आत्मघाती हमलावर 350 किलोग्राम से अधिक विस्फोटक सामग्री के साथ, भरी गाड़ी को लेकर सुरक्षाकर्मियों के काफिले में घुस गया और विस्फोट कर दिया।

इस हमले में 40 से अधिक जवान शहीद हुए और करीब 35 घायल हुए। इस हमले की जिम्मेदारी पाकिस्तान स्थित आतंकी संगठन जैश–ए–मौहम्मद ने ली और हमलावर का नाम काकापोरा निवासी आदिल अहमद डार उर्फ वकास बतलाया गया, जो इस हमले में मारा गया। इस हमले में राजस्थान के हेमराज मीणा (कोटा), रोहिताश लांबा (जयपुर), जीतराम (भरतपुर), नारायणलाल गुर्जर (राजसंमद) और भागीरथ (धौलपुर) भी शहीद हो गए।

इस हमले के 13 दिन बाद 26 फरवरी, 2019 को भारत की वायुसेना ने पाकिस्तान के बालाकोट इलाके पर हवाई हमला किया, जिसमें 300 से अधिक आतंकियों के मारे जाने का दावा किया गया। इसके बचाव में पाकिस्तान ने भी एफ–16 विमानों से भारत पर हमला किया, जिसका प्रत्युत्तर देते हुए भारत की वायुसेना के मिग–21 विमानों ने आसमान में ही एफ–16 विमानों को चकनाचूर कर दिया। किन्तु इस संघर्ष के दौरान भारत की वायुसेना के विंग कमांडर अभिनंदन वर्तमान पाकिस्तानी सीमा में चले गए। इससे पूर्व अभिनंदन ने 27 फरवरी 2019 को पाकिस्तान के एफ–16 विमानों का पीछा करते हुए एक विमान मार गिराया। बाद में उनका विमान एक मिसाईल का निशाना बन गया, जिसके नष्ट होने से पहले ही वे कूद गए, किन्तु पाकिस्तान की अधिकृत कश्मीर की सीमा में फँस गए। पाकिस्तान के सुरक्षा बलों ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया, किन्तु भारत के दवाब के आगे झुकते हुए पाकिस्तान ने लगभग 60 घंटों बाद उन्हें 1 मार्च 2019 को भारत को सौंप दिया। इस अदम्य साहस के लिए अभिनंदन को 15 अगस्त 2019 को, युद्ध के समय दिया जाने वाला तीसरा सर्वोच्च सम्मान वीर–चक्र प्रदान किया गया। अभिनंदन को पाकिस्तान से लौटने के बाद पहली पोस्टिंग राजस्थान के सूरतगढ़ स्थित एयरबेस पर दी गई।

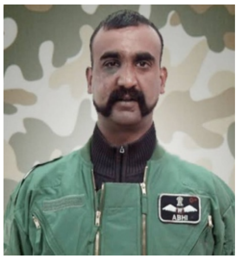

भारतीय वायुसेना के विंग कमांडर अभिनंदन

राजस्थान के शहीद–

(1) रोहिताश लाम्बा– पुलवामा आतंकी हमले में राजस्थान के जवान रोहिताश लाम्बा भी शहीद हो गए। केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल के जवान रोहिताश लाम्बा जयपुर जिले के अमरसर थाना इलाके के गाँव गोविन्दपुरा बासड़ी के रहने वाले थे। उनकी मृत्यु से एक वर्ष पूर्व शादी और दो माह पूर्व संतान हुई थी। नवागंतुक संतान को देखकर वे छुट्टियों से सेवाकार्य पर लौटे थे कि यह हमला हो गया और वे शहीद हो गए।

शहीद रोहिताश लाम्बा

(2) भागीरथ– पुलवामा हमले में शहीद भागीरथ धौलपुर जिले के दिहौली थाना इलाके के गाँव जैतपुर के रहने वाले थे। वे छः वर्षो से केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल की 45 वीं बटालियन में कार्यरत थे। चार वर्ष पूर्व विवाहित भागीरथ के तीन साल का बेटा और डेढ़ साल की बेटी हैं। वे भी छुट्टियां बिताकर लौट रहे थे, तब यह हमला हुआ, जिसमें वे शहीद हो गए।

शहीद भागीरथ

(3) नारायणलाल गुर्जर– पुलवामा आतंकी हमले में शहीद नारायणलाल गुर्जर राजसमंद जिले के बिनौल गाँव के निवासी थे। अपनी मृत्यु से कुछ समय पूर्व नारायणलाल ने सोशल मीछिया पर अपना एक विडियो पोस्ट कर कश्मीर के विपरीत हालातों में चुनौतीपूर्ण कार्यों को अंजाम देने के साहस को रेखांकित किया था।

शहीद नारायणलाल गुर्जर

(4) जीतराम गुर्जर– पुलवामा आतंकी हमले में राजस्थान के भरतपुर जिले के नगर तहसील अन्तर्गत गाँव सुंदखाली के जवान जीतराम गुर्जर भी शहीद हो

गए। जीतराम गुर्जर केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल की 92 वीं बटालियन में कार्यरत थे। 28 वर्षीय जीतराम गुर्जर के डेढ़ साल और चार माह की बेटी थी। पूरे इलाके में उनकी देशभक्ति के चर्चे होते थे।

शहीद जीतराम गुर्जर

(5) हेमराज मीणा– पुलवामा आतंकी हमले में शहीद हेमराज मीणा, कोटा जिले की सांगोद जहसील के गाँव विनोद खुर्द के रहने वाले थे। हेमराज दो बेटों और दो बेटियों के पिता थे और केन्द्रीय रिजर्व पुलिस बल में तैनात थे।

शहीद हेमराज मीणा

राजस्थान सरकार ने एक ओर जहाँ पुलवामा में हुए आतंकी हमले की घोर निंदा की, वहीं दूसरी ओर शहीदों को श्रृद्धांजलि देते हुए उनके परिवारों के प्रति संवेदना व्यक्त की। राजस्थान सरकार ने पुलवामा हमले में शहीद होने वाले राजस्थान के पाँचों जवानों के परिवारों को 25 लाख रूपए अथवा एक लाख रूपए के साथ 25 बीघा जमीन अथवा एक लाख रूपए के साथ एम.आई.जी. फ्लैट दिये जाने की घोषणा की है।

इस प्रकार राजस्थान में शौर्य और वीरता की एक लम्बी परम्परा रही है। देश की रक्षा के लिए अपने प्राण उत्सर्ग करने के अतिरिक्त राजस्थान के लोगों ने लोकतांत्रिक प्रक्रिया और अपने अधिकारों के लिए भी वीरतापूर्ण संघर्ष किया है। अमृता देवी बिश्नोई का पर्यावरण रक्षा के लिए बलिदान, अरुणा रॉय के नेतृत्व में सूचना के अधिकार के लिए संघर्ष, विभिन्न जन आंदोलन इसके नागरिकों के शौर्य का बखान करते हैं, जो किसी भी कीमत पर अपने सम्मान की रक्षा करने हेतु प्रतिबद्ध रहे हैं।

अभ्यास प्रश्न

अति लघु उत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान की भूमि की तुलना थर्मोपल्ली से किसने की?
2. परमवीर चक्र से अलंकृत राजस्थान के दो वीरों के नाम लिखिए।
3. राजस्थान के किस वीर को सर्वप्रथम महावीर चक्र प्राप्त हुआ?
4. कारगिल युद्ध में राजस्थान के किन योद्धा सैनिकों को वीर चक्र से अलंकृत किया गया?
5. शौर्य चक्र प्राप्त करने वाले राजस्थान के किन्हीं दो सैनिकों के नाम लिखिए।
6. पुलवामा हमला कब हुआ था?
7. अभिनंदन वर्धमान को कौनसा पुरस्कार दिया गया था?

लघु उत्तरात्मक प्रश्न

1. परमवीर चक्र किस योगदान के लिए प्रदान किया जाता है?
2. पीरू सिंह शेखावत के बारे में आप क्या जानते हैं?

3. कारगिल युद्ध में राजस्थान के वीरों की भूमिका रेखांकित कीजिए।

4. अभिनंदन वर्धमान कौन हैं? आप उनके साहस के बारे में क्या जानते हैं?

5. पुलवामा हमले पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न

1. राजस्थान की शौर्य परम्परा की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

2. सेना द्वारा दिए जाने वाले विभिन्न सम्मानों के बारे में बतलाते हुए, उन सैनिकों के नाम सूचीबद्ध कीजिए, जिनका संबंध राजस्थान से है।

3. पुलवामा हमले में शहीद राजस्थान के शहीदों का परिचय दीजिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बी. एल. पनगड़िया, राजस्थान में स्वतंत्रता संग्राम, 2013, जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी
2. डॉ. नलिनी शर्मा, मेवाड़ में जन आन्दोलन, 2013, बीकानेर, विकास प्रकाशन
3. शंकर सहाय सक्सेना एवं पदमा शर्मा, बीजोलिया किसान आंदोलन का इतिहास, बीकानेर, राजस्थान राज्य अभिलेखागार
4. विनीता परिहार, राजस्थान में प्रजा मंडल आंदोलन, 2016, जयपुर, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी
5. रामनारायण चौधरी, वर्तमान राजस्थान, 1948, अजमेर, राजस्थान प्रकाशन मंडल
6. डॉ. मथुरालाल शर्मा, कोटा राज्य का इतिहास, जोधपुर, राजस्थानी ग्रन्थागार
7. गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी
8. K. S. Saxena, The Political Movement and Awakening in Rajasthan, 1972, Jaipur, S. Chand
9. A History of Rajasthan, Rima Hooja, Rupa Books, 2005, Jaipur
10. Tribal Agrarian Movement, P.C. Jain, Udaipur, 1989